प्रेमरत्न

PREM RATNA

BY

BIBI RATNA KUVAR

बीबीरत्नकुवर

ने बनाया ॥

उनके पौत्र

बाबूशिवप्रसाद

की आज्ञानुसार छापा हुआ

PRINTED FOR HER GRANDSON

BABU SIVAPRASAD

बनारस

यंत्रालय सुल्तानहिन्द में ॥

जोखूराम

ने छापी

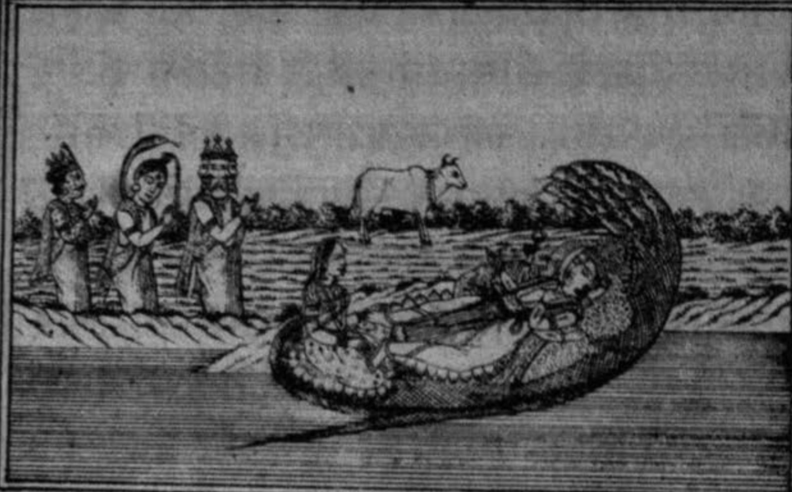
1863

॥विज्ञापन॥

बहुतेरे मनुष्य ऐसा कहते हैं कि अब इस काल में स्त्रियों का पढ़ना लिखना भारत वर्ष से लोप होगया और बहुतेरे ऐसा भी कहते हैंकि यह जाति अर्थात् स्त्री पढ़ने लिखने के योग्य ही नहीं इनके पढ़ाने लिखाने में चाहे जितना परिश्रम करो कदापि कुछ न आवेगा कितने ही ऐसा सोचते हैं कि स्त्री जो पढ़ना लिखना सीखेंगी अवश्य बिगड़ जायँगी और कुमार्ग गामी होंगी और कितने अगले समय की स्त्रियों का वृत्तान्त मन से भुला कर ऐसा समझते हैं कि नारी का चित्त ही विद्या उपार्जन में न लगेगा इन्हे बिधाताने केवल घर गृहस्थी का काम करने को रचा है इस कारण हमने अपनी दादी बीबी रत्न कुवर का बनाया हुवा यह प्रेमरत्न ग्रंथ छपवाने का उद्योग कियाहै वह संस्कृत में बड़ी पंडिता थीं छहों शास्त्रकी वेत्ता पारसी भाषा भी इतनी जानती थीं कि मौलाना रूम की मसनवी और दीवान शम्स तबरेज़ जब कभी हमारे पिता पढ़ कर सुनाते तो वह उस्का सम्पूर्ण आशय समझ लेतीं गाने बजाने में अत्यन्त निपुण थीं और चिकित्सा यूनानी और हिन्दुस्तानी दोनों प्रकार की जानती थीं योगाभ्यास में परिपक्व और यम नियम और वृत्ति रिषि मुनियों की सी

सत्तर बरस की अवस्था में भी बाल काले और आँखों की ज्योति बालकों कीसी वह हमारी दादी थीं इस्से हम को अब उनकी अधिक प्रशंसा लिखने में लाज आती है परन्तु जो साधु संत और पण्डित लोग उस समय के उनके जानने वाले काशी में वर्त्तमान हैं वह उनके गुणों को अद्यावधि स्मरण करते हैं॥ ॥

शिवप्रसाद



श्रीराधाकृष्णायनमः॥अथ प्रेमरत्न लिख्यते॥सो
रठा॥अविगत आनँदकंद।परम पुरुष परमात
मा॥सुमिरि सु परमानंद।गावत कछु हरिजस वि
मल॥१॥पुनि गुरु पद सिरनाय।उर धरि तिनके
बचन बर॥कृपा तिनहिँ की पाय।प्रेमरतन भाष
त रतन॥२॥अगम उदधि मधि जाहि।पंगु तरहिँ
बिनु जिमि तरनि॥तैसिय रुचि मन याहि।अमित
कान्हजस गान की॥३॥पै मो मन विस्वास।पुरव
त पूरन काम प्रभु॥उरपुर सकल निवास।निज
जन को अभिलाष लषि॥४॥लीला अगम अपा
र।पार न पावैँ सेस सिव॥जासु स्वास श्रुति चार।
तिहि गुन गन को गनि सकहि॥५॥अमित चरित्र
विचित्र।यथा सक्ति गावत सकल॥निज मुख कर

न पवित्र। भाषत हरि गुन गन विमल॥६॥ भक्त हृदै सुष दैन। प्रेम पूरि पावन परम॥ लहत श्रवन सुनि चैन। भव वारिध तारन तरन॥७॥ इहाँ कहौं विस्तारि। मिलन सकल कुरुषेत्र को॥ कथा जु प्रथम उदार। करि वरनौं संक्षेप तिहि॥८॥ दोहा॥ भई भूमि जब दुखित अति। असुरन के अघभार॥ ब्रह्मादिक सुर संग ले। चली धेनु तन धार॥१॥ क्षीर सिंधु के तीर मिलि। कीन्ही जाय पुकार॥ अस्तुति करि विस्तार सब। निज निज मति अनुसार॥२॥ जै जगवंद मुकुंद हरि। जै जै सच्चिदरूप॥ जै जै पूरन ब्रह्म पर। नित्यानंद स्वरूप॥३॥ जै जै प्रनतारत हरन। पुरुषोत्तम जगदीस॥ गुना गाध निबोध अज। सकल बिस्व मन सीस॥४॥ कारन करन अनंत गुन। करिय सकल उद्धार॥ हरिय नाथ धरनी गरुब। धरिय मनुज अवतार॥५॥ कमलाकर चापत चरन। सेस सेज मैं सैन॥ बोले करुनाऐन प्रभु। सुनि सुर गद गद बैन॥६॥ जन दुष देषि दुषित सदा। करुणा सिंधु षलारि॥ अवनी हित अघ हरन हरि। कह्यौ लैन औतार॥७॥ गगन गिरा सुनि हरषि सुर। आये निज निज धाम॥ पुनि गर्भा कर्षन भये। संकर्षन बलराम॥८॥ चौपाई॥ अ

व हरि जन्म कहौं सुभ गाई। सुनत सकल जिहि
पाप नसाई॥ भादौं तिथि अष्टमि बुद्धबारी। रजनि
कृष्ण अवतरे मुरारी॥ १॥ माता पितहि कृतारथ की
न्हौ। चारि भुजा धरि दरसन दीन्हौ॥ पुनि प्रभु तिन
कहं बहु समुझाए। गोकुल गोप नंद ग्रह आए॥
२॥ महर भवन भए आनंद भारी। मुदित सकल
ब्रज के नर नारी॥ तहं बस बाल केलि रस कीन्हा।
तात मात ब्रज जन सुष दीन्हा॥ ३॥ पुनि मधुबन ग
वनत नंदलाला। गोपी ग्वाल भए बेहाला॥ बहुरि
मिलन तिनसौं प्रभु भाष्यौ। अवध लागि तिन प्रानहिं
राष्यौ॥ ४॥ मथुरा जाय असुर संघारे। कंस मारि भुव
भार उतारे॥ उग्रसेन सिर छत्र धराए। जनक जननि
कहं निगड़ छुड़ाए॥ ५॥ बहुरि द्वारिका जाय बसा
ई। छपन कोटि ले जदुसमुंदाई॥ रिधि सिधि तहं
नौ निधि बिधि छाई। कंचन पुरी पुरानन गाई॥ ६
॥ ब्रह्मलोक जिहि लषत लजावै। सो संपति का पैं क
हि आवै॥ तहं हरि भये द्वारिका नाथा। द्वारावति कौं
करी सनाथा॥ ७॥ इक सत अष्ट प्रिया पट भाषी।
सोरह सहस महल अरु राषी॥ सो सकलन मैं सर
स पियारी। श्रीरुकमिनि की बातहि न्यारी॥ ८॥ ति
न तें हरि अंतर नहिं राषैं। छिन छिन की निज मन

की भाषैं॥इक दिन चली प्रेम की गाथा।हा ब्रज क
हि सोच्यौ जदुनाथा॥९॥तब रुकमिन प्रभु सन क
र जोरी॥बोली वचन मधुर रस बोरी॥पुरी द्वारिका
सम नहिं कोऊ।अमरावती न पटतर सोऊ॥१०॥
पितु वसुदेव देवकी माता।रिद्धि सिद्धि नौ निधि वि
ख्याता॥षट् दस सहस आठ पट रानी।सो संपति
प्रभु मनहिं न मानी॥११॥पुनि पुनि सुमिरत गोकु
ल ग्रामा।उरतैं नहिं बिसरत सो ठामा॥तिनकी
प्रीत कहो समुझाई।जिनमैं तुम मन रहत सदाई
॥१२॥ सुनि रुकमिनि के वचन सुहाए।प्रेम पुल
कि लोचन जल छाए॥तब बोले यौं राजिव नैना
।तुमजु कहत सो साँचे बैना॥१३॥ पितु वसुदेव
देवकी माई।तिन्हहूँ करत छोह अधिकाई॥पै
नहिं मुहि बिसरतब्रिज बाता।नंद बबा अरु ज
सुदामाता॥१४॥ तिन की प्रीत बरनि नहिं जाई।
जिहि विधि मैं उनतैं सुष पाई॥छिन छिन मुष ल
षि लेत बलैया।को सप्रेम अब कहै कन्हैया॥
१५॥कहँ सद माषन मैया करिकै।मथि राषत मे
रे हित धरिकै॥ब्रिज सुष नहिं बिसरत बिसराए
।जिहि लषि सुर मुनि मन ललचाए॥१६॥ दोहा
॥ वह वृंदाबन सुष सघन।कुंज कदम की छाँहिं

॥ कनक मई यह द्वारिका। ताकी रज सम नाहिं ॥ १॥ नृपति सभा सिंघासनरु॥ जिहि लषि लजत अनंग॥ नहिं बिसरत वह सषन को। गोचारन बन संग॥ २॥ राज साज साजे सकल। तिमि नहिं नेकु सुहाहिं॥ गुंजमाल बन चित्रि जिमि। मोर मुकुट मन माहिं॥ ३॥ रानी सोरह सहस तुम। करत रहत अति प्रीति॥ श्रीराधा छबि मोह की। कछु ही न्यारी रीत॥ ४॥ गोपी सोरह सहस सब। लोक लाज पति त्याग॥ अर्द्ध निसहि रस रास करि। मम हित तैं चित पाग॥ ५॥ बिछुरत तिन तैं सकुचि मन। कहौं मिलहुं पुनि आय॥ उनतैं उरिन भयौं नहीं। रह्यौं द्वारिका छाय॥ ६॥ बहुरि जाय ब्रिज भेंटिये। नटवर भेष बनाय॥ ब्रिज बासिन सुष दीजिए। मुरली मधुर बजाय॥ ७॥ निस दिन मेरी ही रहत। ब्रिज बासिन मैं ध्यान॥ करत बनत अब बात मुहि। उनहीं के मन मान॥ ८॥ चौपाई॥ भक्ताधीन विरद प्रभु केरे। गावत बानी वेद घनेरे॥ संतत रहत भक्त के पासा। पुरवत हैं प्रभु तिनकी आसा॥ १॥ जे सप्रेम हरि सौं मन लावैं। तिनकौं कबहूं नहिं बिसरावैं॥ ग्राह ग्रसित गज जाय छुड़ाए। गरुड़ छाड़ि तहं आतुर धाए॥ २॥ पुनि प्रभु पंडव जरत बं

चायो। द्रुपद सुता को बसन बढ़ायो॥ अजामेल जम तैं रख लीन्हो। भजन प्रताप ध्रुवहि बर दीन्हो॥ ३॥ जनै प्रहलाद अभय करि थाप्यो। ताती बायु न बारहि ब्याप्यो॥ जे जन मनतैं ध्यावहिं जैसे। ताकहं प्रगट होत प्रभु तैसे॥ ४॥ अग जग सकल विश्व के स्वामी। सर्बमई सब अंतरजामी॥ प्रेम युक्त ब्रिज जन मन ध्यायो। तातै प्रेम हृदे हरि छायो॥ ५॥ प्रभुके मन यह रहत सदाहीं। ब्रिज बासिन तैं भेंट्यो नाहीं॥ इक दिन दिनकर ग्रहन भयो जब। बहु नर नारी जात चले तब॥ ६॥ जानि परम कुरुषेत्र हि पावन। सकल चले तहँ ग्रहन नहावन॥ यह सुनि जदु नंदन मन मानी॥ एक पंथ द्वै कारज ठानी॥ ७॥ कह्यो जदुव प्रति जदुकुल केतू। हम सबहू चलिये कुरुषेतू॥ अरु जेते परिजन पुर बासी। तिनहुं कहहु यह बात प्रकासी॥ ८॥ ग्रहन नहाहु सकल तहँ जाई। सुनि आयसु सब सीस चढ़ाई॥ मुदित सकल आनंद रस पागे। गवन साज साजन कहं लागे॥ ९॥ अधिकारिन सब साज सँवारे। नाना वाहन सुभग सिंगारे॥ अरु महलन के साज नबीने। तापर बर बसननि कसि दीने॥ १०॥ सुनत परसपर सब नर नारी। घर घर नि

ज निजसौंज सँवारी॥ द्वारामति के जिते निवासू। च
ले जात सब परम हुलासू॥११॥ बढ्यौ कटक अ
ति परम विशाला।चले संग अगनित भूपाला॥
निज निज फेटन लीन्हो कसिकर।चले सकल हरि
जस कर लसकर॥१२॥ कारे करिवर गरजन लागे
॥ सावन घन जनु लषि अनुरागे॥ अगिनित तुरंग
चले हिहिनावत।खच्चर वसह ऊँट अररावत॥१३
॥चौपालन सुषपाल पालकी।डोली अरु चंडोल
नालकी॥ अमित भीर मग परत न पायो। धूरि धुंध
नभ मंडल छायो॥१४॥ मग मैं होत कोलाहल भा
री।मुदित करत कौतुक नर नारी॥ यौं पहुँचे कुरुषे
तहि जाई।परि गयो कटक तहाँ छित छाई॥१५॥
हाट बजार दुकान सुहाई।तहँ सब वस्तु मिलत म
न भाई॥ देस देस के जात्री आए। भये तहाँ मिलि
अनंद वधाये॥१६॥ दोहा॥ बरन बरन बर तंबु वन
।दीन्ही तान वितान॥ अति फूले भूले फिरत।डेरा
परत नजान॥१७॥जबतैं मथुरा तन चितै तजि ब्रि
ज जन जदुनाथ॥ बिरह बिथा ब्रिज मैं बढ़ी।तहँ सब
भये अनाथ॥ २॥ सुइ तीरथ कुरुषेत सब।आये ग
हन नहान॥जसुमति राधा गोपिगन।नंदादिक वृष
भान॥३॥ गोप एक नट भेष सजि।आयो बीच बजा

र॥ तहँ घर भर लसकर पर्यौ। सो अति रह्यौ निहार॥४॥ गुंजाभूषन पष सिषी। बाँसे लटपट पाग॥ जँघ जँघिया चित्रित सु तन। लषि सब कौतुक लाग॥५॥ इक जादौ हँसिके कह्यौ। कहाँ तुम्हारो बास॥ अति सुंदर तन छबि बनी। नाम कहहु परकास॥६॥ तब उनहूँ कहि तुम कहहु। काके संग कित ठाउँ॥ द्वारामति पति कटक यह। कह्यौ जदुव निज नाउँ॥७॥ सुनत द्वारिका नाम तिहि। लियो बिरह उर छाय॥ हा नंद नंदन कान्ह कहि। गयो ग्वाल मुरझाय॥८॥ चौपाई॥ इक गोपाल संग मम जाई। बस्यो नृपति ह्वै सोइ पुरछाई॥ हमकहँ छाड़ि भयो सो न्यारे। ताही बिनु सब भये दुषारे॥१॥ तुम लसकरिये भूप उदारा। कत पूछत हम जात गँवारा॥ सुनि जादव कछु मन बिहँसाना। तुम ब्रिज बासी हौ हमजाना॥२॥ जिनको तुम भाषत गोपाला। उनही को यह कटक रसाला॥ अब दुष मेटहु भेंटहु तिनतैं। गयो ग्वाल हरि कटकहि सुनतैं॥३॥ तिनकहँ आगम सगुन जनायो। कछु अनंद ह्वैहै मन आयो॥ ग्वालहि आवत रहे निहारी। गद गद कंठ न सकत सम्हारी॥४॥ दूरहि तैं बोल्यो गोपाला। मन मोहन आये नंदलाला॥ जिन बिन सब ब्रज भये दु

पारे। ते आये इहँ प्रान पियारे॥५॥ सुनि गोपिन न
हिं परत पत्यारो। कहँ ऐसो है पुन्य हमारो॥ सुनत नं
द नैनन जल छाये। ऐसे भाग कहाँ हम पाये॥६।
॥षोज लेहु सब पूछहु सारे। कहँ उतरे प्रानन के
प्यारे॥ सुनतहि जसुमति ह्वै गई बौरी। नाग्वालहि
पूछत उठि दौरी॥७॥ आये स्याम सत्य कहु भैया।
मोहि दिखावहु नेकु कन्हैया॥ निज लालन कौं कं
ठ लगाऊँ। दुसह विरह को ताप नसाऊँ॥८॥ कत
अन गहरु करत बे काजहि। भैंटहु बेगि सकल ब्र
ज राजहि॥ तब ऐसे भाष्यो नँदराई। अब हरि होहिं
न ब्रजकी नाई॥९॥ मनिन षचित बैठत सिंघास
न। चवँर छत्र कर गहे षवासन॥ अतिहि भीर नृ
प बार न पावैं। द्वारहि तैं बहु फिरि फिरि जावैं॥
१०॥ छत्र पतिहि छरियन बिलगावत। तहँ हम स
ब की कौन चलावत॥ छपन कोटि जदु छाड़ि स
गाते॥ क्यौं मानैं धायन के नाते॥११॥ कोउ कह ऐ
से कैसे जैहैं। हम कहँ लषि हरि मनहिं लजैहैं॥
कोउ कह मनि आभूषन पहिरे। अंबर बर विचि
त्र रंग गहिरे॥१२॥ कोउ कह हम तो ऐसहि जा
हीं। अब तो कछु बनि आवत नाहीं॥ हरिकों देषि
परम सुष पैहैं। ना अनुचर कर मारहु षैहैं॥१३॥

कोउ कहै हम नीके भुज भरिहैं। भये भूपतौ काधौं करिहैं॥ करत मनोरथ कोउ मनमाहीं। कोऊ षोज लैन उठ जाहीं॥ ५४॥ कहत परसपर मुदित गुवाला। अब तो फिरि आये गोपाला॥ इक कहै अब गोकुल लै जैहैं। हमतैं बहुरि जान कहँ पैहैं॥ ५५॥ कोउ नाचत है दै करतारी। बहु बिधि करत कुलाहल भारी॥ इक एकन तैं देत बधाई। मानहुँ सब नें गई निधि पाई॥ ५६॥ दोहा॥ भये मगन सब प्रेमरस। भूलि गये निज देह॥ लघु दीरघ बै नारि नर। सुमिरत स्याम सनेह॥ १॥ कहति परसपर जुवति मिलि। लै लै कर अकवार॥ प्रीतम आये री सषी। तन साजहु सिंगार॥ २॥ इक आई आनँद उमगि। प्यारिहिं देत बधाय॥ प्रान नाथ सुष दैन इहैं। मोहन उतरे आय॥ ३॥ तहँ राधा की कछु दसा। बरनत आवै नाहिं॥ मलिन भेष भूषन रहित। विवस रहित तन माहिं॥ ४॥ कबहुँ झुरावत विरह बस। पीत बरन है जाय॥ कबहू व्यापत अरुनता। प्रेम मगन मुद छाय॥ ५॥ कान्ह कान्ह कबहू कहत। कबहुँ रटत निज नाम॥ मौन साधि रहिजात जब। स्मित होत अति बाम॥ ६॥ चष चितवत जित तित हरी। स्रवन मुरलि धुनि लीन॥ स्याम बा

स बसि नाक मनि। रूप पयोनिधि मीन॥ ७॥ तन
मन धन ग्रह जनन की। नैकहु सुधि तिहि नाहिं॥
चितवत काहू नहिं दृगन। लगन लगी उर माहिं
॥ ८॥ चौपाई॥ मन भावन आवन सुनि जागी।
भई चेत चित चितवन लागी॥ कहि कित ठाढ़े
री गोपाला। तूँ जु कहत आये नंदलाला॥ १॥ त
ब ऐसे बोली ब्रज बाला। अब नहिं वे हैं री गोपा
ला॥ कहँ मुरली मुष बजत रसाला। बरही मुकुट
कहाँ बनमाला॥ २॥ तन बन धातु न चित्रित का
री। कहँ वह काँधे कामरि कारी॥ लागत लाज ल
षत अब ग्वाला। भये द्वारिका जाय भुवाला॥ ३॥
सोरह सहस बरी नृपबारी। कत पूछहिं अब ग्वारि
गँवारी॥ कहवावत जादौ कुल नंदन। छोरत हैं भू
पति के बंदन॥ ४॥ नृप किरीट माथे पर छाजै। उर
मनि गन गुन हार बिराजै॥ यह सुनि कै राधा मुस
काई। पायँ पलोटन की सुधि आई॥ ५॥ गुंज माल
हित फिरत कन्हाई। माँगत सौ सौ हाहा षाई॥ कै
तिक राज तिलक किन होहू। पै नहिं हरि बिसरहिं
ब्रज छोहू॥ ६॥ कोटिक बरहिं न राजकुमारी। मेरी उ
नकी बातहि न्यारी॥ वारि चरहिं वारी मन भावत।
पै परसत सो मन अकुलावत॥ ७॥ नाना वस्तु धर

ह्व बरु लाई।चुंबक चिमटत लोहहि जाई॥ वे नहिं
मानहिं रंक उदारा।स्यामहिं केवल प्रेम पियारा॥८
॥ हरि गुन सुमिरि मगन मन प्यारी।तैसहि मुदित स
कल ब्रज नारी॥ कोऊ कहत जु अबहीं पाऊं।मन
मोहन कों कंठ लगाऊं ॥९॥ बहुरि द्वारिका जान न
पावैं।सब मिलि कै ब्रजही लै जावैं॥ इक सवितहि
विनवत मनमाहीं। अब धौं हरि बोलहिं की नाहीं॥
१०॥ इक कह जौ मो तन मुसुकावैं।तौ निज जन्म सु
फल करि पावैं॥ अपर कहत इक उरहन दैहौं॥दाँ
व कूबरी को अब लैहौं॥११॥ एक कहत आवन
तौ देऊ।को जानै राजन के भेऊ॥ ऐसे सब हरि मैं म
न दीन्हे।निज निज उक्ति मनोरथ कीन्हे॥१२॥ अति
अनंद नहिं जात बषानी।मनहुं सिखी सुनि वारि
द बानी॥ ब्रजबासी जन के यौं हाला।गाय बछ स
ब गोपी ग्वाला॥ १३॥ जिन्ह गैयन गोपाल चराई
।तिनकी दसा बरनि नहिं जाई॥ स्याम विरह सों र
हीं झुराई।चरत नहीं तृन उदर अघाई॥१४॥ ह
स्त कमल की सब प्रतिपाली।तिन के मन छाए ब
नमाली॥ सुनि हरि नाम सकल अनुरागीं।स्रवन
उठाय प्रेम रस पागीं॥१५॥ पसु के प्रेम जहाँ अस
गावैं।नर नारिन के कौन चलावैं॥ ऐसे सब ब्रज

जन मन फूले। हरि आगम सुनि सब सुधि भूले॥१६॥
दोहा॥ सो जादव आतुर कही। द्वारपाल कहँ जाय॥
ब्रज जन सब आये इहाँ। हरि कौं देहु जनाय॥१॥
द्वारपाल सुनि तुरत यह। भेजी षबर पठाय॥ नंदादि
क नर नारि सब। ब्रज के उतरे आय॥२॥ ब्रज बासि
न के नाम सुनि। बिबस भए घनस्याम॥ प्रेम अंबु अं
बुधि उमगि। लोचन ललित ललाम॥३॥ पुलकित
तन कंपित बदन। बचन न सकत संभार॥ सुपन
किधौं है सत्य यह। परत नहीं पतियार॥४॥ रहे च
कित नित ध्यान धरि। उर साल्यौ सो ठाम॥ त्रिभुवन
सुष पावत नहीं। नंद धाम बिस्राम॥५॥ अब वह क
ब सिसु छबि धरहुँ। जो पाऊँ ब्रज बास॥ कौन भाँति
ब्रज जनन के। पूजिय मन की आस॥६॥ भये जल
ज लोचन असन। मोचन जल अति धार॥ बिसरि
गई सब सुध हरिहि। तनहू की न संभार॥७॥ श्री
बसुदेव रु देवकी। यह सुनि आयि धाय॥ देषि रहे ह
रि की दसा। धनि धनि कह्यौ सुनाय॥८॥ चौपाई॥
अँसुवन पोछति अंचर माता। थंभत नहीं दोउ दृ
ग जल जाता॥ भिंजे बसन उर स्वास न मावैं॥ नर च
रित्र सब प्रगट दिखावैं॥ ९॥ भव जल निधि के सोष
न हारे। नैन नीर नहिं सकत सम्हारे॥ गहि गहि क

र जननी समुझावै। हरष समै कत ही दुष पावै॥२॥
कहत देवकी अब मैं जानी। मन की बात आजु
प्रगटानी॥ जब तबही तू रहत उदासा। कछु गुनि
गुनि मन लेत उसासा॥३॥ सो तव बात जानि न
हिं गयऊ। आज मनोरथ पूरन भयऊ॥ ऐसे मुदि
त देवकी माई। बड़े भाग आए सुष दाई॥४॥ ब
हुत जनन कहँ देइ बधाई। कहत धन्य दिन आ
जु सुहाई॥ प्रथम आय जिन षबर जनाई। मन भा
वती बस्तु तिन पाई॥५॥ अति अनंद बसुदेव मु
दित मन। कहत धन्य यह दिवस घड़ी छिन॥ सुन
हु लाल प्यारे घनस्यामा। भये तुम्हारे पूरन कामा॥
६॥ नंद बबा अरु जसुदा माई। आय मिले यह अ
ति मन भाई॥ या सम हरष न दूजो तुमको। चाहिय
कछुक बधाई हम कों॥७॥ पितु के बचन सुनत
सुष दानी। बोले करुना निधि मृदु बानी॥ जैसो हर
ष भयो यह हम कौं। कहा बधाई दीजिय तुम कों
॥८॥ त्रिभुवन वैकुंठादिक माहीं। या के जोग बधा
ई नाहीं॥ ब्रज बासी अति मोकौं प्यारे। उन के ऊप
र तन मन वारे॥९॥ सो यह बस्तु तुम्हारोइ ताता।
जानत सब जग में विष्याता॥ कहा बधाई तुमको
दीजै। यह अपराध छमा प्रभु कीजै॥१०॥ सुनि सुत

बचन परम सुष पाये॥ धन्य धन्य कहि प्रभुहि सुना
ये॥ बड़े भाग ऐसे सुत पाये। पूरब पुन्य उदै ह्वै आ
ये॥ ११॥ पुनि पुनि निजहि कहत बड़ भागी। ब्रह्म ध
स्यो नर तन जिहि लागी॥ धन्य जसोदा धनि नंदरा
ई। सिसुपन सुत करि गोद षिलाई॥ १२॥ अबलौं
गुन गावत हौं सोई। तुम सम जग सुसील नहिं को
ई॥ पूरन नेह निबाहन हारे। भक्तन तैं कबहूँ नहिं
न्यारे॥ १३॥ बहु बिधि करि बसुदेव बड़ाई। प्रेम मग
न उर हरष नमाई॥ ऐसे अति मन मोद बढ़ाए।
सानंद पुन निज ठाम सिधाए॥ १४॥ तब इक सषि
रनिवासहि जाई। रानिन प्रति सब बात जनाई॥
आजु कहा जानी नहिं जाई। रोवत हैं अति ही जदु
राई॥ १५॥ यह सुनि सब रानी उठि धाईं। रुकमिनि
आदि तहाँ चलि आईं॥ हरि दृग सन निज बदन दु
राई॥ देवै के ढिग बैठीं आई॥ १६॥ दोहा॥ मधुर
बचन रुकिमिनि कहत। श्रीदेवकि हि सुनाय॥ आ
जु कहा जानि न परत। रोवत हैं जदुराय॥ १॥ कह
त देवकी आजु भय। पूरन मन के काम॥ नंद ज
सोदा गोप गन। सब आये इहि ठाम॥ २॥ तिनके
आगम सुनत इहि। रह्यो न कछु संभार॥ उमगि
प्रेम आनंद उर। दृगन चली बहि धार॥ ३॥ बे

याको सुष बहु दियो। सिसु पन लाड़ लड़ाय॥ ति
न के गुन कहि जात नहिं। कीन्ही बड़ी सहाय॥४
॥ लालन को पालन कियो। हित करि निज सुत
जानि॥ द्वादस बरष रह्यो तहां। बाल केलि रस ठा
नि॥ ५॥ हुतो तबहिं अति अचगरो। डरत काहु से
नाहिं॥ महर महरि के दृगन दुरि। निकसि सदन
से जाहिं॥ ६॥ रोकत टोकत जुबति मग। लुभयो गो
पिन माहिं॥ बन बनितन के संग फिरत। वे मोहित
इन पाहिं॥ ७॥ अजहूं लौं बिसरत नहीं। रहत उन
हिं में प्रान॥ नंद जसोमति गोपि जन। सदा हृदै ब्र
ज ध्यान॥ ८॥ चौपाई॥ सुनि के मन बिहंसीं सब रा
नी। यह तो बात आजु हम जानी॥ कहत परसपर
सब मुसुकाई। वेई ब्रज क्रीड़ा सुधि आई॥ १॥ श्री
रुकमिनी मौर सबती की। जानन हारि पीय के जीकी
॥ अति मन हरष कहत मृदु बानी। धन्य धन्य आपु
न कौं जानी॥ २॥ ब्रज बासी मम भागन आए। सुफ
ल फले सब मन के भाए॥ धन्य नंद धनि जसुमति
माई। जिन के गुन गावत सुषदाई॥ ३॥ धन्य धन्य
श्रीराधा प्यारी। धन्य सकल ब्रज गोप कुमारी॥ जिन
के हृदे बसत घनस्यामा। नटबर भेष धरे अठ जामा
॥ ४॥ मन बच करि हरि उनके बल्लभ। तिनके दर

स हमहिं अति दुर्ल्लभ॥ श्रीमुष हू यह वचन उचा
रे। ब्रज बासी मोकों अति प्यारे॥५॥ पुनि पुनि मो म
न ऐसी आवे। करिय सोई जो स्यामहिं भावे॥
हरि कों ब्रजजन में लै जैये। सब बिधि मन के साध
पुजैये॥६॥ सुनि रुकमिनि की अमृत बानी। जदु
पति अति मन मैं सुष मानी॥ यह सुनि कै आई
सतभामा॥ कुटिल चातुरी गरब कि धामा॥७॥
बड़े नृपति की सुता कहावे। काहू कौं चित में नहिं
लावे॥ मुष चमकाय चढ़ाई त्यौरी। हरि मुष लगी
अति हि लड़ बौरी॥८॥ चिबुक लाय कर पुनि मुस
काई। करत ठठोली हरि हि सुनाई॥ अब काहे मन
करत उदासी। मुदित होहु आये ब्रज बासी॥९॥ वे
ई सषा संग के ग्वाला। अरु वेई आईं ब्रज बाला॥
राधा हू संग आई व्है है। तुम्हरो दरस देषि सुष पै
है॥१०॥ तुमहूं धरो नटवर छबि सोई। वेई तुम अरु
वेई कोई॥ यह सब नृप सिंगार उतारो। वैसहि मो
र मुकट सिर धारो॥११॥ वैसहि काहि न चीतहु गा
ता। नीके घसि घसि बन के धाता॥ गुंजा गथि पहि
रो तन माहीं। मिलहु सषन दै दै गर बाहीं॥१२॥ वै
सहि माषन जाय चुरावहु। रही साध तब अब सु
पुरावहु॥ तारी दै दै कूदहु गावहु। बन बन तिन

संग धेनु चरावहु॥१३॥कछनी कछि धरि कमरी काँधे॥बंसी फूंकि बुलावहु राधे॥ औरहु संग लेहु ब्रज भामिनि॥रचहु रास किन आजुहि जामिनि॥१४॥ कैसि नाचत हो तिन साथा॥जोरि जोरि गोपिन तैं हाथा॥ सो करि कृपा हमहिं दिषरैये। नैनन को फल हमहू पैये॥१५॥ सुनि हरि सतभामा की तानैं। सजल नैन कछु मुष मुसकाने॥ मन मन जानत करत ठठोली। समय पाय इन चित की षोली॥१६॥ दोहा॥ बिहँसि चले जदुराय तब। महल बाहिरे आय॥ कह्यौ जनावहु षबर यह। दाऊ जू प्रति जाय॥१॥ ब्रज वासी नर नारि अरु। नंद जसोमति माय॥ग्रहन न्हान के हित सकल। उतरे हैं इत आय॥ २॥ बल कहँ षवर पठाय उत। जहँ ब्रज जन समुदाय॥पद पंकज पावड़ि रहित। आप चले तहँ धाय॥३॥ भूप भीर षर भर षरे। बहु जन उमड़े आय॥ जकि थकि सब कौतुक निरषि। अति मन अचरज पाय॥४॥ सुन्यौ जसोदा नंद यह। आवत हैं सुषदाय॥मन अनंद तन सुध बिसरि। रहे बारि दृग लाय॥ ५॥ मच्यौ सोर ब्रज जनन मैं। आवत नंद किसोर॥मुदित गोप निज निज सजन। भूषन ठौर कुठौर॥६॥ इक इक पट षैंचत जुगल। कोऊ न काहु संभार॥ठाढ़े

बाँधत पाग सिर। झुकि झुकि झाँकत द्वार॥ ७॥ ति
हि छिन देष्यौ दूरितें। आवत श्री नंदनंद॥ ब्रजजन
फूले कुमुद बन। मनहुं उदित भये चंद॥ ८॥ चौपा
ई॥ जसुमति रही निहारि चकीलौं। मन अकुलात न
भेट सकी त्यौं॥ भई भीर गोपन की भारी। अगिनत त
हाँ जुरे नर नारी॥ १॥ धाय धाय आवत हैं ग्वाला। भ
रि भरि भुज भेंटत गोपाला॥ सो छबि कछु बरनत न
हिं आवे। सत रति पति की दुतिहि लजावै॥ २॥ अ
ति सुंदर तन स्याम तमाला। उदर षान छबि भुजा बि
साला॥ दुति मंडल कुंडल स्रुति सोहै। रतन जटित
देषत मन मोहै॥ ३॥ कंठ कपोल चिबुक छबि न्यारे
॥ सुक नासिका अधर अरुनारे॥ दृग गति अति षं
जनहिं लजाए। भ्रू धनु मनहुं मनोज चढ़ाए॥ ४॥ सी
स किरीट चारु छबि जाला। उर सोहत मुक्ता मनि
माला॥ गोपन मध्य लसत सुष कंदा। उड़गन मैं
जिमि पूरन चंदा॥ ५॥ कोउ आगे कोउ भेंटत पीछे। को
ऊ अंकम लेत तिरीछे॥ कोऊ आय पायँ पर परहीं। त
न मन धन निवछावर करहीं॥ ६॥ नटवर रूपहि गोप
लुभाने। नृप के साज सु मनहिं न माने॥ लेहिं उतारि मु
क्त मन माला। गुंजमाल पहिरावत ग्वाला॥ ७॥ एक नज
र अंबर ले लीन्हे। कांधे पर कांवर धै दीन्हे॥ इक लै मोर

पंषसिर धारैं।मन मैं नेकु न संक बिचारैं॥८॥प्रीत रीत लषि हरि सुष पावैं।तिन के मन की साध पुरावैं॥देषि देषि जदु बंसी रीझैं।कोउ ससंक ह्वै मन मैं षीझैं॥९॥कोउ अपने मन में अभिलाषै।कोऊ तिन के भागनि भाषै॥ज्यौं ज्यौं मोहन आवत नेरे।त्यौं त्यौं लेत गोप अति घेरे॥१०॥चकित स्याम कह्यौ कहँ मैया।तबहि जसोमति लष्यौ कन्हैया॥सपदि परे चरनन पर जाई।दृग जल पद दीन्हे पषराई॥११॥जाके पद मुनि जन मन ध्यावैं।संभु नहीं उरतैं बिसरावैं॥जा पद रेनु परसि ऋषि नारी।सिला बिमोचि दिव्य तन धारी॥१२॥जा पद पदुम इंदिरा हाथा।प्रगटी सरिता पावन पाथा॥जाके पद ब्रह्मादि न पावैं॥सो जसुमति पद सीस नवावैं॥१३॥कर गहि माता उर लपटायो।कठिन बिरह की ताप नसायो॥लाय रही छतियन तैं माता॥पुनि पुनि चूंबि बदन जल जाता॥१४॥मुष मूछन की रेष सुहाई।देषि देषि जननी बलि जाई॥मोकौं यह सुष दुर्ल्लभ भारी।मो समान को आजु सुषारी॥१५॥लषि लषि जसुमति तन सुषदानी।दृग सरोज भरि डारत पानी॥बारे पन की सब सुधि आई।जैसे कनिया बैठत जाई॥१६॥ दोहा॥
दृग जल पोछत मातु कर।लिए बहुरि उर लाय॥

तुम जनि रोवहु प्रान धन। जननी बलि बलि जाय॥
१॥ तन नृप भूषन बसन लषि। मातु अंग नहिं मा
य॥ बिसरि गयो सब बिरह दुष। मनु ऐसे हि सदा
य॥ २॥ इहि बिधि जननिहिं भेंटि प्रभु। मेटि सकल
दुष दंद॥ बहुरि रहत हे नंद जहँ। तहँ आये सु
ष कंद॥ ३॥ दूरहि तें देषत हरि हि। बिबस भये अ
ति नंद॥ आकुल लोटत धरनि परा। फसे मोह के फं
द॥ ४॥ कबहूँ आवत सुधि कबहुं। मुरछत सिथिल
उछाह॥ स्रवत स्वेद थरहरत तन। उमग्यो प्रेम
प्रबाह॥ ५॥ परे जाय प्रभु पाये परा। लीन्हो हृदै लगा
य॥ कहा कहौं तिहि समै की। दसा बरनि नहिं जा
य॥ ६॥ ग्रीवां गहि हरि नंद की रोवत धरत न चेत
॥ भक्तन हित नाना चरित। ठानत कृपा निकेत॥ ७॥
नँद नँदनंदन मिलन लषि। धरत न काहू धीर॥ इ
क पछरत द्वक गिरत महि। इक छिरकत मुष नीर॥
८॥ चौपाई॥ एक कहत चेतहु मन माहीं। जीवन
दिन कत भरत वृथा हीं॥ चितवत एक निमेष बि
सारे। एक न तन की सुरति सम्हारे॥ १॥ इक अनि च
कित कहें कह कीजे। एक कहत जीवन फल लीजे
॥ हम सम किहि जग आजु अनंदा। बहु दिन पै
देषे मुष चंदा॥ २॥ एक कहत धनि आजु घरी छि

ना। एक कहत कुरुषेत्र हि धनि धन॥ इक उत जात एक इत आवै। इक आतुर मारग नहिं पावै॥३॥ भीरहि मैं भामिनि धसि जाहीं। लाज संक सब तजि मन माहीं॥ कोउ सलज्ज दूरहि तें दरसै। कोऊ निकट जाय पद परसै॥४॥ एक कहत सरकहुरी आली। देषन देहु नेकु बनमाली॥ एक षड़ी तहँ लज्या बोरी। हम कों हरि देषरैहै कोरी॥५॥ लाज हमारी काज बिगार्‌यो। हाहा हम नहिं स्याम निहार्‌यो॥ बदत होड़ तिय आपस माहीं। इक लषि आवत एक न जाहीं॥६॥ इक कह कब की देषिरही री। अब तो मेरी बार भई री॥ सो कह हौं तो अबहीं आई। देष्यौं नाहीं नंद दुहाई॥७॥ एक कहत हम पायन परहीं। इक कर जोरि निहोर न करहीं॥ हौं चलिहौं सषि तेरे गोहन। मोहि दिषैहव री अब मोहन॥८॥ एक कहत आवहु मम साथा। हौं तुहि दिषरैहौं ब्रज नाथा॥ तिन मैं जे हरि जू की प्यारी। षट दस सहस गोपिका न्यारी॥९॥ जिन मन मोहे रसिक बिहारी। बंक बिलोकन जादू डारी॥ बंसी बस कीन्ही ब्रजबाला॥ मृदु मुसकाय ठगी नंदलाला॥१०॥ लोक लाज तृन सम करि जान्यो॥ सरबस धन मन मोह न मान्यौ॥ तिन की दसा बरनि नहिं जाई॥ विरह बिबस तन सुध

बिसराई॥११॥ चलीं जूथ कर मिलि सब तिन मैं॥मि
लन जात अरु जुबती जिन मैं॥नम्र बदन धरनिहिं
दृग लाई।हिरदैं भीतर बसत कन्हाई॥१२॥जाय
परीं चरनन अति आतुर।तिनमैं ललिता जू अति
चातुर॥बिरह बिथा ब्रज की उर षुटकी।परसत पा
यँ लई भर चुटकी॥१३॥ लज्या बस बोलत कछु
नाहीं।घस्यौ भाल दोउ चरनन माहीं॥तैसे ही चंदा
वलि आई।आय पायँ पर सीस नवाई॥१४॥अति
बिहाल कछु सुधि नहिं ताही॥दसन काटि लीन्हे
पद माहीं॥पुनि नरवा चाट्यौ रद लाई।निरषि प्री
त प्रभु मन सुष पाई॥१५॥ राधा की गति कहत
न आवै।बिरह अनल कंचन तन तावै॥ हरि हि
बिलोकि नैन जल बाढ़ो।कंपत अति आतुर दुष
दाढ़ो॥१६॥ दोहा ॥नीलांबर दुरवत बदन।सकुच
त अति हि ससंक॥मनहुं घनांतर लसत छबि।
षोडस कला मयंक॥१॥ प्रीत पुरातन सुध भई।
निरषि स्याम सुष रास॥चित्र लिषीसी ह्वै रही।भ
रि भरि लेन उसाँस॥२॥ ठाढ़ी हरि ढिग जुबति म
धि।बोलि सकत कछु नाहिं॥बहत दृगन जलधा
र दुउ।परत स्याम पद माहिं॥३॥ मनमोहन चक्रि
त मनहिं।कौन तीय यह आहि॥स्रवत नैन तैं उ

स्मजल।इती तपत कर आहि॥४॥तबही पदपर
सत दृगनि। बरस्यो सीतल मेह।रसिक सिरोमन साँ
वरे।जान्यो राधा एह॥५॥ अति तलफत बिलपत
विकल।दुरि दुरि लेत बलाय॥ लुइ लुइ कर पंक
ज चरन।नैननि रहत लगाय॥६॥नायरही पुनि पा
यँ सिर।बिसरि लोक की लाज॥प्यारी की यह ल
षि दसा॥बिबस भए ब्रज राज॥७॥ कबहुँ प्रियहि
निरषत प्रगट।निमिष टारि बल बंधु॥ कबहूँ उर ध
रि ध्यान मन।मगन होत सुष सिंधु॥८॥ चौपाई॥
ऐसे प्रेम फंद के माहीं।फसे जुगल छूटत है नाहीं
॥कुवँरि जननि इत उत बिललावे।ढूंढ़त कतहुं
षोज नहिं पावे॥१॥सषी संग की मिलि मिलि आ
ई।राधा कहँ धौं रही भुलाई॥ तब हीं पाये मोहन
पाहीं।परी विकल कछु सुधि नहिं ताही॥२॥ज्यौं
त्यौं पकरि किनारे ल्याई॥करि पट ओट तहाँ पोढ़ा
ई॥कर पद पटकत चेत न राई॥बहुत भाँत सषिय
न समुझाई॥३॥ कौन सुनै समुझै किहि बाता।स्र
वत प्रस्विद सिथिल सब गाता॥मोहि लियो मन म
दन गुपाला।राधा जू के हाल बिहाला॥४॥स्यामभि
लत कह इहि गति सोई।कोउ कह रुज कछु भाष
त कोई॥नाक मूंदि इक मुष जल डारे।इक फूंक

त कछु पढ़ि पढ़ि झारे॥५॥पेख्यो अंतर देव मुरारी।सो क्यौं छूटहि कौतुक कारी॥कछुक बार बीते सुधि आई।हिलकी लागी स्वास न माई॥६॥यह लषि सब मन धीरज आयो॥जान्यौ स्याम बिरह उर छायो॥पुनि अलि मिलि समुझावन लागी॥तू तो निपट लाज री त्यागी॥७॥जननी हरि पद ढिग तैं लाई।तोकौं नेकहु चेत नमाई॥जब यह उरहन सषिन सुनाई।तब घूँघुट करि अति हि लजाई॥८॥ह्वै सचेत हरि रही निहारी।तहाँ भीर नारिन की भारी॥जे लांबी ते लषि सुष पावैं।छोटी अति मन मैं पछतावैं॥९॥कत हम नान्हीं भईं बिधाता।निरषि न सकत नंद को ताता॥तिनहिं कहत तुमतो हरि देषे।ब्रज मैं निज संगी करि लेषे॥१०॥हमहूं कौं अब नेकु दिषावो।तो यह सुजस बड़ो तुम पावो॥इक तिय कटि गहि ताहि उचावै।सुंदर स्याम निरषि सुष पावै॥११॥एक कहति धनि भाग हमारे।हम देषे नंद नंदन प्यारे॥इक मन मुदित प्रफुल्लित डोलै।जोइ आवत सोइ मुष तैं बोलै॥१२॥इक कह हौं अबहीं मिलि आई।हरि कौं नेकहु मान न माई॥प्रथमहिं सबन कहे धौं कैसे।अब नाहीं हैं गिरधर वैसे॥१३॥भये जाय राजन के राजा।बोलत हैं नाहीं

बेकाजा ॥ सो इक मुष कह करहुं बड़ाई। मनु ब्रजही
में बसत कन्हाई ॥ १४ ॥ इक कह मानहु धेनु चराये
वृंदाबन तैं अबहीं आये ॥ नटवर बेष रहित सब
सोहैं। बेसहि बचन बिहँसि मन मोहैं ॥ १५ ॥ भूपति
भूषन अंग बर भ्राजे। लगत चारु छवि छबि कौं
लाजे ॥ परहु छार मम अंषियन माहीं। कछुक अ
धिक मुष रेष सुहाहीं ॥ १६ ॥ दोहा ॥ ऐसे मिलि स
ब कृस्न तें। भये मुदित नर बाम ॥ कहत धन्य धनि
आजु हम। नैनन देषे स्याम ॥ १ यह लषि ब्रज सुर
भी सकल। अति हिं उठीं अकुलाय ॥ प्रेम डोर षैंची
बिबस। चलीं स्याम ढिग धाय ॥ २ ॥ मन मन अति
पछतात हम। कत हिं भये पसु जौन ॥ मिले सकल
ब्रज जनहिं हरि। हम कौं पूछहि कौन ॥ ३ ॥ हे मन
मोहन स्याम घन। कुंज बिहारी लाल ॥ बचन हीन ह
म दीन पसु। जानि तजी गोपाल ॥ ४ ॥ इत उत चम
कत चकित चित। चितवत स्रवन उठाय ॥ हरि
के दरस लषत सकल। गईं धेनु मचलाय ॥ ५ ॥ गै
यन की गति स्याम लषि। लीन्ही भरि अकवार ॥
झुकि झुकि हेरत बदन तन। फेरत हाथ मुरारि ॥ ६
देषि दूबरी गात अति। भरि आये दोउ नैन ॥ पोछ
त रज निज अंचरन। संतोषत मृदु बैन ॥ ७ ॥ यह

धौरी कजरी सुता। यह रतुली को लेहि ॥ यह धूम
रि षंजन नयनि। अति सुष दीन्हे मोहि ॥ ८ ॥ चौपा
ई ॥ इहि बिधि हरि सबहिन तैं भेंटे। बिरह ताप ब्र
ज जन के मेंटे ॥ जाके मन हो जैसी भावना। तैसिहि
ताहि मिले मन भावन ॥ १ ॥ कहँ लौं हरि के मिल
न बतावैं। अति कुटंब बरनत नहिं आवैं ॥ बहु जन
आवत बिनहीं नाते। मिलि मिलि जात प्रेम मद मा
ते ॥ २ ॥ कौतुक निरषि। बिबुध मन हरषत ॥ पुनि पु
नि कुसुमांजुलि भरि बरषत। कहत धन्य गो गोपी
ग्वाला। प्रीत सहित जिन मिलत कृपाला ॥ ३ ॥ छए
गगन सुरलोक भुलाने। धनि धनि कहि ब्रज जनन
बषाने ॥ ऐसे ही भेंटे बलरामा। जेहि बिधि सबन मि
ले घनस्यामा ॥ ४ ॥ प्रथम नंद जसुमति से जाई। मिले
स्याम हीं लौं बलि भाई ॥ ब्रज जन सषा संगि सैं वैसहि
। पुनि जुबतिन तें भेंटे तैसेहि ॥ ५ ॥ दाऊ के गुन अति
गंभीरा। नीलांबर बर गौर सरीरा ॥ सब बिधि सबहिन
कौं सुष दीन्हे। पूरन सकल मनोरथ कीन्हे ॥ ६ ॥ चन्द्र
बदन दोउ बीर निहारी। चित चकोर ब्रज जन बलिहा
री ॥ कहत नंद जसुमति सुनि प्यारे। अब हमतैं मति
होहु नियारे ॥ ७ ॥ बिछुरत मर जैहैं पितु मैया। बिरध स
मैं जनि तजहु कन्हैया ॥ अवध लागि हे प्रान हमारे। अ

व नहिं तजि हैं सरन तुम्हारे॥८॥सुनत नंद जसुमति
की बाता।मन हीं मन बिहँसत जग त्राता॥अति अभे
द कोउ भेद न पाया।प्रभु प्रेरित जग व्यापक माया॥९
॥अषिल अनादि नित्य सुष रासी।रोम रोम ब्रह्मांड बि
लासी॥मिलन मुदित मन षिरह बिहाला।यह सब
स्याम रच्यौ नट ष्याला॥१०॥मन मुसुकाय कह्यौ सु
ष सिंधू।दीन दयाल विस्व के बंधू॥जनि डरपहु अ
पने मन माहीं।अब वह व्यथा व्यापिहै नाहीं॥११॥
रहि हौं तुमरे निकट सदाईं।यौं कहि हरि वे बात
भुलाईं॥सुनि मोहन के बचन रसाला।मुदित भये
सब गोपी ग्वाला॥१२॥बिसरि गई वे ब्रज की बाता
।प्रमुदित निरषि मनोहर गाता॥तिहि छिन सकल
सवारी आई।तब कर जोरि कह्यौ दुउ भाई॥१३॥अ
मिष बचन बोलत ब्रजनाथा।चलिय सदन सब करि
य सनाथा॥यह सुनि सब ब्रज जन हरषाने।चले सक
ल आनँद रस साने॥१४॥षास सवारिन नंद जसोदा
।जिन नित हरिहि षिलाये गोदा॥तैसी ही प्यारी कौं
आई।चढ़ी मुदित उर राषि कन्हाई॥१५॥छत्रपती
गति चली सवारी।कौतुक लषन जुरे नर नारी॥जे
जन मग मैं भीर लगावैं।तिन कौं छरीदार बिलगावैं
॥१६॥दोहा॥राव रंक कोउ गनत नहिं।सब बिलगा

वत जात॥रतन जरी कंचन छुरी।परी सकल के गात॥१॥प्यादे अस्व सवार चरा अरु आसेबरदार॥ चोपदार अगिनत चले।करत नकीब पुकार॥२॥ यौं ब्रजजन ल्याये भवन।पुनि सबहिन उतराय॥उतराये ब्रज जुबति जन पट अंतर करवाय॥३॥ कह्यौ सबनि कोउ इनहिं जनि। रोकहु टोकहु जान॥ सुनि स्यौं स्यौं ब्रज जन मुदित।फूले गात न मात॥४॥ ठाम ठाम नाना बिबिधि।दिये बिछौन बिछाय॥सब ब्रज बासिन कौं तहाँ।मोहन राषे जाय॥५॥ जसुमति गोपिन मिलन हित अबही पुरहि पठाय॥नंदहि संग बसुदेव ढिग।लै आये जदुराय॥६॥देषि मिले बसुदेव उठि।मित्र मित्र कहि धाय॥लिये नंदहू लाय उर।छये दृगन जल आय॥७॥तबहि नंद कर जोरि जुग।कहत सुनहु महराज।धन्य धन्य धनि भाग हम।देषे चरनन आज॥८॥चौपाई॥कह बसुदेव सुनहु नंदराई।कहँलगि तुमरी करहुँ बड़ाई॥तुम से मित्र भाग तैं पायो।पै हमतैं कछु नहिं ह्वै आयो॥१॥तुमतैं उरिन होत हम नाहीं।कैसहु जनम जनम के माहीं॥हरि हलधर तुम हम कों दीन्हे।सब विध कुसल कुसल मोहि कीन्हे॥२॥ तुम पसाय यह नौ निधि पाई।तुम हीं दीन्हे भई बड़ाई॥नेह निबाह करी तुम पूरी।त्रि

भुवन में यह जस भइ भूरी॥३॥कंस असुर तें बं
स बचायो॥तुमरो गुन कछु जात न गायो॥यों बसु
देव नंद परतोषे।बहु भाँतिन सनमानि सँतोषे॥४॥
ऐसिहि देषि देवकी माई॥जसुमति कों भेंटी उठि
धाई॥कहत आजु बड भाग हमारे।नैननि निरषे दर
स तुम्हारे॥५॥मथुरा हू देष्यौ नहिं कबहू।अति म
नही अभिलाषा तबहू॥जसुमति को उर उमड्यौ भा
री।नैननि जल नहिं सकत सम्हारी॥६॥कहत देव
की सुनहु जसोमति॥तुम निज मन गलान आनहु
मति॥काहेकों चित करत उदासा।रहति सदा किन
हरि के पासा॥७॥स्याम राम तुमरे सुत दोऊ।अहनि
सि तुम गुन गावत वोऊ॥मन करि हरि ब्रज माहिं ब
सत हैं।देह धारि मुनि इहां लसत हैं॥८॥कह जसुमति
सुनु देवे माई।हौं हरि की रहिहौं व्है धाई॥मंजु कुं
ज मुष लषि सुष पैहौं।कोटि करहु अब ब्रज नहिं
जैहौं॥९॥गोपी परी देवकी चरनन।कहा कहौं ता
छबि की बरनन॥बेनी सोहत पीठ ललामा॥मनु र
बि अहि कों करत प्रनामा॥१०॥प्यारी जब पर्‌यौ
पद आई।देवे गहि तब हृदे लगाई॥बदन बसन
करतें बिलगाई।रूप देषि मनमाहें सिहाई॥११॥
चंपक बरन नैन रतनारे।कोटि काम या छबि पर

रो॥मुष दुति देषत ससि अभिलाषे।जननी ध
न्य उदर निज राषे॥१२॥सुनत रहे हे जिती बड़ाई
॥तातें हूँ देषी अधिकाई॥सब बधुवन तें रूप उ
जागर।नीलासी अति लषियत नागर॥१३॥कैसे
स्याम तजी यह राधा।रूप रासि छबि अगम अगा
धा॥मन हीं मन राधा मुसुकाई।घूँघुट सोभा बरनि
न जाई॥१४॥बिहँसत षरे स्याम सुषदैना।प्यारिहि
लषत तिरीछे नैना॥देवै हूँ सब बधू बुलाई।जसुमति
पायँ परीं सब आई॥१५॥दे असीस पुनि उर तें ला
ई।मुदित निरषि मुष लेत बलाई॥कहत उयो बास
र यह नीको॥सुफल फल्यो सब मेरे जी को॥१६॥दो
हा॥तब रुकमिनि कर जोरि कह।जदुनंदन प्रति
आय॥मो मन अभिलाषा करिय।राधा की पहुनाय
॥१॥सुनि सप्रीति रुकमिनि वचन।कह्यो स्याम अभिरा
म॥लै जावहु किन धाम निज।पुरवहु मो मन काम॥
२॥प्यारी मूरत प्रेम की।मन बच मम अनुरक्त॥ जो
याको सेवन करिहि।पावहि मेरी भक्त॥३॥यह सु
नि रुकमिनि मुदित अति।गई राधिका पाहिं॥सषिन
सहित निज संग ले।आई मंदिर माहिं॥४॥राधा रुक
मिनि दोउ मिलीं॥सोभा बरनि न जाय॥पुनि भेंटी गो
पीन तें उर आनंद न माय॥५॥तब रुकमिनि मन

कौ कहत। द्वारामति की बात॥ जैसें हरि ब्रज जनन
कौं। भजत रहे दिन रात॥ ६॥ कबहूं ब्रज चरचा क
रत। प्रेम मगन ह्वै जाहिं॥ ऐसे रुकमिन मुदित मन
गोपी मंडल माहिं॥ ७॥ तिहि छन आये स्याम तहँ
। हृदै न हरष समाय॥ जहँ बैठी राधा कुँवरि। हरि
बैंठे ढिग जाय॥ ८॥ चौपाई॥ यह सुनिकै रानी स
ब आईं। सतभामादि भामिनी धाईं॥ चलहु लष
न अहिरन की पाँती। जिनकौं हरि मानत बहु भाँ
ती॥ १॥ सब के मन अभिलाषा भारी। हम कौं स्याम
देखावहु प्यारी॥ एकहि रूप सकल ब्रज गोरी। इन
में को वृषभान किसोरी॥ २॥ भामा कहत बतावत
नाहीं। लहत बड़ाइ कछु या माहीं॥ हसत स्याम अ
ति बिहंसत प्यारी। मन मन कहत ढीठ यह नारी
॥ ३॥ मारुत बल घूंघुट फहरावै। सो कछु सोभा
बरनि न आवै॥ नीलंबर में सोहत कैसी। मनु घन
मध्य तड़ित छबि जैसी॥ ४॥ तबही सतभामा पहिचा
नी। रूप अनूपम निरषि सिहानी॥ मन मन कहत
कहा बिधि कीन्हो। इतनो रूप अहीरन दीन्हो॥ ५॥
ठौर कुठौर बिचारत नाहीं। सठ न देत नृप घरनिन
माहीं॥ नैक झलक लषि भइ गति ऐसी। नीके नि
रषत ह्वै है कैसी॥ ६॥ तबहि स्याम घन मन की

जानी। हँसि घूँघुट खोले निज पानी॥ उयो इंदु बादर दि बिदारी॥ जब नीलांबर मुख तैं टारी॥ ७॥ तीन भुवन की सुंदरताई। श्रीराधा के बदन सुभाई॥ सतभामादि निरखि सब रानीं। कछु मुरझाय बहुर सकुचानीं॥ ८॥ स्याम सबन को गरब नसायो॥ स्यामा के मन हरष बढ़ायो॥ तब श्रीजदुनंदन सुखदाई। सब रानिन के मन की पाई॥ ९॥ एक बात भाषत मैं नीकी। सुनहु सकल यह तुमरे जी की॥ नानाबिधि टोना जंग माहीं। ताकाहु के बस मैं नाहीं॥ १०॥ मो कौं बस जो चाहै कीनो। टोनो आयो एक नबीनो॥ सुनत सकल चक्रित मन माहीं। भामा कहत कहत कत नाहीं॥ ११॥ तब बोले ब्रज दूलहराई। गर्ब प्रहारी जन सुखदाई॥ जे प्यारिहि सेवै मन लाई। ताके बस मैं रहौं सदाई॥ १२॥ या सम टोना त्रिभुवन माहीं। बसीकरन मोहि दूजो नाहीं॥ सुनि रुकमिनजू के मन मानी। धन्य भाग आपुन कौं जानी॥ १३॥ दुउ तन राधा रुकमिन सोहैं। मध्य स्याम सुंदर मन मोहैं॥ अरु चहुंपास सकल कामिनिसी। जनु घन घेरि रही दामिनि सी॥ १४॥ अधिक तृषित दृग तृपित न पावैं। दरस सरस पीवत सचु पावैं॥ ब्रज ललना हरिरूप लु

भानीं॥ अवलोकत निज दसा भुलानीं॥१५॥ नख दुति मनहुं इंदु परकासा॥ जन मन उदित बिमल आकासा॥ चरन सरोज चारु अरुनाई॥ कुलिसांकुस ध्वज चिन्ह सुहाई॥१६॥ दोहा॥ जंघ जुगल सोभित मनहुं कदली थंभ सरूप॥ निरषि षीन कमनीय कटि॥ बिपिन बस्यौ मृग भूप॥१॥ सुभग उदर लावन्य निधि॥ नाभि भवँर छबि लीन॥ तहां माल मनि रत्न जनु॥ त्रबलि लहरि दुति दीन॥२॥ किधौं बाग मनसिज कियो॥ नाभि सुधारस कूप॥ मनि पँचरँग फूले बिबिधि॥ रोमावली अनूप॥३॥ उर मरकत गिरि पर मनहुं॥ बग पँति गजमनि माल॥ बाहु बिसाल मनहुं उभै षेलत हैं बर ब्याल॥४॥ कंबु कंठ त्रय रेष जुत॥ सोभित अति अभिराम॥ भ्राजत मनि सुभ कौसतुभ॥ जाकी प्रभा ललाम॥५॥ चिबुक मनोहर दसन दुति॥ दामिनि लखति लजाय॥ कल कुंडल झलकत स्रवन॥ सोभा बरनि न जाय॥६॥ नासा सुक सुंदर लसत॥ अधर बिंब फल हेत॥ पहुंचत नहिं ललचात जनु॥ अति अद्भुत छबि देत॥७॥ लोचन लोल कपोल पर॥ कुटिल अलक बिथरान॥ नील कमल पर मधुप कुल॥ मनहु करत रस पान॥८॥ चौपाई॥ बंक भृकुटि मधि तिलक बनाई॥ ता छबि की उपमा नहिं

पाई॥बिसद भाल मरजाद बिहाई।उमगि चलीज
नु सुंदरताई॥१॥सीस किरीट क्रांत की सोभा॥ला
जत कोटि अदित कीआभा॥हरि छबि निरषि बिब
स ब्रज गोरी।तन मन बिसरि भईं मति भोरी॥२॥
अरस परसपर रूप निहारैं।चितवत पलक न अं
तर डारैं॥हरि यह दसा निरखि सुख पावैं।हाव
भाव करि प्रेम बढ़ावैं॥३॥जा पदकंज सनक उर
लावैं।नारद आदि निरंतर ध्यावैं॥पद परागरज जाच
त योगी।तिहि ब्रज बनितन मान्यौ भोगी॥४॥ हरि
कों संतत भक्ति पियारी।ज्यौं त्यौं कोऊ भजो नरनारी
॥जिनहिं भई हरि पद परतीती।भजहिं स्याम रिपुद
ल मन जीती॥५॥लोचन हरि दरसन पुट प्यावैं।स्या
म सुजस श्रुति सुनि चित ल्यावैं॥नासा स्याम सुगंध
लुभानी।रसना हरि हरि बोलत बानी॥६॥ सब म
ग है स्यामहिं उर ल्यावैं।एकहु स्वास न हरि बि
सरावैं॥जीवन मरन न सुष दुष तिन कौं।केवल
हरि पद धन है जिन कौं॥७॥ षान पान को ब्यस
न तजैं जे।निःकामी है हरि हि भजैं जे॥तिनु कौं ह
रि नहिं गहरु लगावैं।कोटि कोस तैं छिन मैं आवैं
॥८॥अगम सुगम अरु तृन हि सुमेरू। करत भ
क्त बस रंक कुबेरू।बेद बिदित निगमा गम गाई।

भक्त बस्य प्रभु रहत सदाई॥९॥ प्रथम स्याम जाँच
न निजजन को॥ दृढ़ बिस्वास लषत तिहि मन को
॥ गोप रवनि प्रभु नीके जाँची॥ एकहु अंग नहीं सो
काँची॥१०॥ आपुहि कान्ह भईं ब्रज बाला॥ प्रेम म
गन हिय हरष बिसाला॥ सरबस बिसरि स्याम र
स पागीं॥ मनहुँ रंक निधि लूटन लागीं॥११॥ के धौं मा
नहुँ गोपी जूथा॥ निरषत बधुहि चकोर बरूथा॥ ब्रज
तिय प्रेम बरनि नहिं जाई॥ जेहि लषि ऊधो ग्यान भु
लाई॥१२॥ एकहि दसा सकल ब्रज गोरी। कछुक
अधिक ब्रषभान किसोरी॥ धन्य धन्य श्री मुष तें भा
ष्यो॥ गोपिन सौं अंतर नहिं राष्यो॥१३॥ तुम सब अ
ति मम प्रान पियारी॥ मोतें कबहुँ पलक नहिं न्या
री॥ कहा भयो हौं बिछुर्यौं जोई॥ मन तें बसत स
दाँ ब्रज सोई॥१४॥ सुनि गोपी हरि अमृत बानी॥ भ
ईं प्रफुल्लित अति सुख मानी॥ भोजन बार जानि
घन स्यामा॥ गये नंद जसुदा के धामा॥१५॥ तब प्या
रिहि रुकमिनी उठाई॥ निज स्नान मंदिर में ल्याई॥
पुनि अति मज्जन करि अन्हवायो॥ जल सुगंध अ
ति चित हुलसायो॥१६॥ दोहा॥ निज कर तें बेनी गु
ही॥ कोमल केस बनाय॥ अंग अंग भूषन सज्यो॥ मं
जुल पट पहिराय॥१७॥ षंजन दृग अंजन अंजो॥ बेंदी भा

ल सँवार॥ अति सप्रीति प्यारिहि सकल कीन्हे सु
भग सिंगार॥ २॥ सोभा अद्भुत को गनहि। सहज रू
प की रास॥ नव सत सजि सिंगार मनु। किय ससि
कोट प्रकास॥ ३॥ इहि बिधि सब ब्रज सुंदरिहि। भू
षन बसन बनाय॥ पुनि कीन्हे भोजन बिबिधि। व्यंज
न बरनि न जाय॥ ४॥ मृदु मंजुल पकवान सुठि। सर
स मिठाई चारु॥ षट रस नाना भाँति के। किये अने
क प्रकार॥ ५॥ करत बियारू राधिका। सब ब्रज कुँव
रि समेत॥ परसत रानी रुकमिनी। निज कर करि अ
ति हेत॥ ६॥ सत भामा अति मन कुढ़त। देषि न हृद
य समाय॥ पुनि पुनि हँसि हँसि कहत मुष। बानी
व्यंग सुनाय॥ ७॥ कत परसत पकवान मृदु। भावत
व्हैहै नाहिं॥ दूध दही घृत देहु ज्यौं। रुचि सौं भोजन
षाहिं॥ ८॥ चौपाई॥ सुनि सुनि सतभामा की बानी।
गोपी आपुस मैं बतियानी॥ यह रानी अति षोटी
भारी। घूँघुट मैं मुसकावत प्यारी॥ १॥ मन मैं कहत
और नहिं कोई। यह रानी सत भामा होई॥ भोजन
करि पुनि अचवन कीन्हा। रुकमिनि सब कर बीरा
दीन्हा॥ २॥ भयउ अस्त रबि निसि प्रगटानी। निज नि
ज सदन गई सब रानी॥ इहाँ नंद जसुमति के पासा
। करत बात हरि परम हुलासा॥ ३॥ निसि बड़ जानि

सेज बिछवाए। जदुनायक निज मंदिर आए॥ रुक
मिनि तब प्यारिहि पौंढ़ाई। सब को सादर सेज बि
छाई॥४॥ आपु न हरि के मंदिर आई। चापन ल
गी चरन सुषदाई॥ मन मोहन कौं नींद न आई
। रुकमिनि प्रति यौं कह्यौ बुझाई॥५॥ अब लौं
प्यारी पौंढ़ी नाहीं। यातैं नींद न मो दृग माहीं॥ त
ब रुकमिनि कर जोरि सुनाई। हौं प्यारि हिं प्रथम
हिं पौंढ़ाई॥६॥ स्याम कह्यौ देषहु किन जाई। वा
कौं नींद नेकु नहिं आई॥ राधा कौ जब जननि
सुवावै। तब सो छिन तेहि दूध पियावै॥७॥ परी
बान यह बारे पन की। को जानै अब वाके मनकी
॥ यह सुनि कै रुकमिनि उठि धाई। तुरतहि निज
करपय औटाई॥८॥ कनक कटोरे मैं ढरकायो। अ
तिहि उतावल मैं न सिरायो॥ हेत सहित अंचर दे
ल्याई। राधा कौं जागत ही पाई॥९॥ फूँकि फूँकि पय
प्यारि हि प्याई। पुनि आपुन हरि मंदिर आई॥ ब
हुरि लगी त्यौं चरनन चापन। सो करि हरि षैंच्यो प
ग आपन॥१०॥ रुकमिनि कहत गई हौं नीके। अब
ही कौन बिथा भई जीके॥ प्यारी कौं तातो पय प्याई।
या तैं जर्‌यौ पर्‌यौ पग आई॥११॥ सोय रहो न सुनी
अब ताई। अचरज बात न परत पत्याई॥ सुनु रुक

मिनि मैं साँची भाषीं॥ तुम तैं कछु अंतर नहिं राषीं॥
१२॥ सदा एक रस मन क्रम बानी॥ राधा मोपैं रहत
लुभानी॥ उर मैं राषत चरन हमारे॥ तातैं परे दू
ध के छारे॥ १३॥ निसि बासर मेरो ही ध्याना॥ मोहि
छाड़ि तिहि बात न आना॥ मैंहूं वातैं होत न न्यारो
॥ झूठ कहौं तो सपथ तुम्हारो॥ १४॥ तबहि स्याम नि
ज पाय दिषाई॥ तब रुकमिनि मन अति पछताई
॥ प्रीति समुझि मन मैं सुष मानी॥ धन्य धन्य राधा
कौं जानी॥ १५॥ बहुरि कहन हरिजू सौं लागी॥ हौं
कह तुमरी नहिं अनुरागी॥ बसत नहीं कत मो उर
माहीं॥ साँच कहहु प्रभु यह हम पाहीं॥ १६॥ दोहा
॥ स्याम कही सुनु रुकमिनी॥ मम पद तो उर नाहिं
॥ सदा बसत तुमरे चरन॥ मेरे हिरदै माहिं॥ १॥ ऐसी
बिधि बहु बात कहि॥ रुकमिन कौं समुझाय॥ दीर
घ रजनी जानि अति॥ सैन कियो जदुराय॥ २॥ इत
प्यारी कौं कल नहीं॥ बढ़ौ हृदै दुष पीन॥ तरफरा
त अति सेज पर॥ जल बिहीन जिमि मीन॥ ३॥ नीद
न आवत नैन मैं॥ कहत अलिन प्रति बैन॥ नंद नं
द ब्रज चंद बर॥ कहाँ गये सुष दैन॥ ४॥ मिले स्या
म जान्यौ जगत॥ मिट्यो न बिरह बियोग॥ हौं बिर
हिन बिरहिनि रही॥ घर घर भोगत भोग॥ ५॥ बार बा

र आवत मन हिं। मरिये सषी कछु षाय॥ काहि प
रे षा कीजिये। वे रानिन के राय॥ ६॥ आसा लगि
तब प्रान है। अब न राषिहौं एह॥ जीव जाहु तो जा
हु बरु। निबहो स्याम सनेह॥ ७॥ कहत सषी सुनि
राधिका॥ कत मन होति अधीर॥ को जाने हरि आ
वहीं। समुझि हमारी पीर॥ ८॥ चौपाई॥ अंतरजामी
मदन गुपाल। प्रगट भये मोहन ततकाल॥ गग
न बरन राजीव बिलोचन। सीस सिषंड मदन मद
मोचन॥ १॥ कुंडल जुगल मनोहर कानन। कोटि दि
नेस लजत दुति आनन॥ अलक झलक कपोल प
र सोह्यो। देषत ब्रज युबतिन मन मोह्यो॥ २॥ चितवन
चारु निरषि छवि भूलीं। अंबुज इव ब्रज भामिनि फू
लीं॥ प्यारी की गति कही न जाई। मनु ससि सूकत बर
षा पाई॥ ३॥ मन भावन लीन्हो उर लाई। घन दामिनि
छवि लषि ललचाई॥ भये परसपर जुगल अधीरा।
समुझ न परत प्रेम की पीरा॥ ४॥ अति प्रबोध कीन्हे
सुष दाई। ब्रज की बिछुरन बिथा नसाई॥ पुनि वैसहि
गोपिन उर लायो। सकल ताप संताप नसायो॥ ५॥ इ
तने दिनन कहाँ हे प्यारे। अब कबहूँ जनि हूजै न्यारे॥
सुधि करि कह्यो पकरि दुउ हाथा। काहे कियो कूबरी
साथा॥ ६॥ भोगत भोग कंस की दासी। हमको पठयो

योग उदासी॥यह सुनि स्याम मंद हँसि दीन्हीं।छोभ सकल ब्रज को हरि लीन्हीं॥७॥बातन हीं दीन्हीं ब हराई।करन लगे चरित्र सुषदाई॥हास बिलास प रसपर करहीं।वे ब्रज कुंज केलि मन धरहीं॥८॥ स्यामा स्याम निरषि इक ठौरैं।गोपी रास मंडली जो रैं।एकन करत प्रेम की घातैं।सुमिरि सुमिरि सो द्वार स की बातैं॥९॥वे ब्रज भाव धरत ब्रज बाला।लषि अति सुष पावत नंद लाला॥जाके मन जो जैसी भा ई।ताकी त्यौं अभिलाष पुराई॥१०॥स्यामहिं बिसरि गईं सब रानी॥और सकल बिसरी रजधानी॥रुकमि नि तहँइ रहत ब्रज जन मैं।लषि लषि चरित अनंदि त मन मैं॥११॥हरि राधा के बदन निहारो।अपने भा गहि धन्य विचारो॥श्री मुष कही सुठोना कीन्हीं।त्रि भुवन पति निज बस करि लीन्ही॥१२॥और सक ल महलन के माहीं।बिरह बिथा फैली चहुँ घाहीं॥ धरत न धीर पीर अति तन मैं।पे न बसाइ कुढ़त मन मन मैं॥१३॥कोउ कह हम कहँ बिधि प्रतिकूला ।उनकौं सब बिधि भा अनुकूला॥यौं महलन बिल लावत रानी।ब्रज जन मैं अटके दधिदानी॥१४॥नव सुष लेत सकल ब्रज बामा।रहतिं स्याम संग आठो जामा॥हरि मुष निरषि मगन मन सब हिन।मानहुं ह

म बिछुरे नहिं कबहिन॥१५॥भाँति भाँति रंग रस उ
पजावैं।नाना बिधि सुष कहत न आवैं॥काहू मन
कछु साध न राषैं।पूरन भईं सकल अभिलाषैं॥१६॥
॥दोहा॥ नंद जसोदाहूं निकटारहत सदा गोपाल॥
बाल चरित्र करत तहाँ।कौतुक सिंधु कृपाल॥१॥ज
सुमति बैसहि स्याम हित।गोरस रषति जमाय॥धौ
री धूमरि धेनु पय।प्रीत सहित औटाय॥२॥ हरि रुचि
लहि नवनीत सदा।मथति आपने पान॥माँगि माँगि
कै षात नित।त्यौं हीं स्याम सुजान॥३॥ बदनप्रभा निं
दत बिधुहि।लोचन सरस बिसाल॥जलद स्याम त
न पीतपट।उर मतंग मनिमाल॥४॥चरन सरोरुह
अरुन छबि।महिमा बरनि न जाय॥जिहि सुबास ब
स ह्वै बंध्यौ॥सिव मन मधुप लुभाय॥५॥सो सिसु लीं
ठानत चरित।नंद सदन के माहिं॥छिन छिन नव ली
ला करत।बरनत आवै नाहिं॥६॥कबहूँ लोटत गो
द मैं।अंग न माय जसोद॥सषन संग षेलत कबहुं
।बाढ़त प्रेम प्रमोद॥७॥देषि देषि सुर सिद्ध मुनि।पु
नि पुनि मन ललचाहिं॥कहत धन्य धन्य ब्रजजन।इ
न सम हम भये नाहिं॥८॥ चौपाई॥ तहं रिषि हरि
दरसन कौं आये।जे कुरुक्षेत्र षेत्र में छाये॥मारकंड
सुक व्यास सप्तमुनि।नारदादि जे महा तपोधनि॥१॥

तिनहिं लेन हरि अग्र सिधाए। संग हलधर बसुदेव सुहाए॥ स्वागत कहि पद सीस नवाये। ऋषियन आसिष बचन सुनाये॥ २॥ हरि की छबि अति अतुल बिलोकी। भये मगन मन सकहिं न रोकी॥ मुनि की दसा निरषि जदुबीरा। श्रवत सरोरुह नैनन नीरा॥ ३॥ कर तैं कर गहि मंदिर ल्याये। मुनि जन मगन प्रेम जल छाये॥ अरघ पाद्य दै पूजा कीन्हा। सादर सबहि बरासन दीन्हा॥ ४॥ पुनि करजोरि कह्यौ जदुराई। बड़ी कृपा कीन्ही रिषिराई॥ जाके दरसन देवहि दुर्लभ। सो प्रभु हम पाये अति सुल्लभ॥ ५॥ कोटि कोटि जप तप व्रत कीजै। तीरथ जाय दान बहु दीजै॥ इह सब किए लहै फल जोई। सत संगत सो छिन मैं होई॥ ६॥ सकुचि कह्यौ मुनिवर विज्ञानी। क्यौं न कहौ प्रभु ऐसी बानी॥ राषत जन की सदा बड़ाई। गावत बेद बिरद चलि आई॥ ७॥ सकल बिदित तुमरी प्रभुताई। सिव सहसानन पार न पाई॥ नेति नेति कहि तिनहुं बषानत। सो तुम हमरी अस्तुति ठानत॥ ८॥ तुम परब्रह्म बिस्व करतारा। नमो नमो तुम बारंबारा॥ तुमहिं भजहिं जे कृपानिधाना। तिनकौं उभै लोक कल्याना॥ ९॥ नाम तुम्हारो आनंदमूला। सुष प्रद सकल समन भव सूला॥ जप तप तीरथ दांन बतावत। लोगन के म

ति को भरमावत॥१०॥तुम सब के गुरु सबके स्वा
मी।तुम सबहिनके अंतर जामी॥अद्भुत सगुन चरि
त्र तुम्हारा।जिहि भजि नर उतरहिं भवपारा॥११॥सु
ष संदोह सदा अविकारा।नरतन धर्यौ हरन भुव
भारा॥ तुम निज रूप दुरायो ऐसे। दारु मध्य दावानल
जैसे॥१२॥कोउ पति पुत्र सगे करि मानत।कोऊ स
त्रु मित्र करि जानत॥तुम्हरी माया जगत उपाया।जै
से कों तैसे मग लाया॥१३॥जापर कृपा तुम्हारी होई
।रूप तुम्हारो जानै सोई॥पुरुष पुरातन अबिगतिगा
मी।जै हरि बार बार प्रणमामी॥१४॥सुनहिं पुराण ग्र
ही गुण गावैं।सिद्ध मुनी जन तारी लावैं॥प्रेम भक्ति बि
नु मुक्ति न होई।सकल ग्रंथ हम देषे जोई॥१५॥ ॥
नाथ कृपा अब हम पर कीजै।सगुन भक्ति आपन प्र
भु दीजै॥इहि बिधि मुनि हरि के गुन गाई।पुलकित
प्रेम रहे अरगाई॥१६॥ दोहा॥ सुनि मुनि जन के बच
न बर।बिहँसे।स्याम सुजान॥दिये कृपा करि तिनहिं
हरि।सगुन भक्ति बरदान॥१॥ हरि माया मोह्यौ जगत
।पहिचानत कोउ नाहिं॥श्रीबसुदेव न जानहीं॥ अरु
बपुरे किन माहिं॥२॥रिषि सन तब बसुदेव तहं। क
ह्यो जोरि जुग हाथ॥ दरस दियो जन जानि मोहि। की
न्हो नाथ सनाथ॥३॥समन सकल अघ दरस तुव

पापी पावन होय॥ पारस परस कुधातु ज्यौं॥ डार
त अवगुन षोय॥४॥ जैसे परम कृपा करी। दरस दि
यो रिषिराज॥ उपदेसिय प्रभु ज्ञान कछु। टूटहिं कर्म
समाज॥५॥ हौं बिषई बस मोह के। गृह सुष में लव
लीन॥ इंद्री गन के रस बिबस। रहत सदा आधीन॥
६॥ सत संगत सेयो नहीं। कियो न जप तप याग॥
बाद गँवायो जन्म नर। अजहुँ न आयो बाज॥ ७॥ जातैं
बाढ़ै धर्म प्रभु। होहि कर्म दलषीन॥ सो उपाय मोहि
भाषिये। तुम मुनि प्रेम प्रबीन॥ ८॥ चौपाई॥ सुनि बसु
देव बचन यौं भाई। बिहँसि कह्यौ तिनतैं मुनिराई॥
जासु तनै बलिराम कन्हाई। जप तप तिनके को अ
धिकाई॥१॥ अषिल ब्रह्मंड उदर है जाही। ते प्रभु बिह
रत तव गृह माहीं॥ अलष अबद्य अखंड अभेवा
। कृपा कटाछ सुबंछहि देवा॥२॥ जाकौं षोजैं बिधि
भव जोगी। ते तव भवन आय भये भोगी॥ तुम सम
भाग न त्रिभुवन माहीं। माया बस सो जानत नाहीं॥
३॥ घट घट श्याम मध्य को बासा। सकल ठौर ज्यौं भा
नु प्रकासा॥ हरि को रूप लषैं यौं जानी। तिन कहँ कहैं
भक्त बिज्ञानी॥४॥ तातैं मन बच क्रम करि मानौ। देव
देव इनहीं कौं जानौ॥ अलष निरंजन ब्रह्म कहावैं। भ
क्त बस्य प्रभु तन धरि आवैं॥५॥ रमा रमन गंजन भव

भीरा।जन रंजन भंजन पर पीरा॥ऐसे प्रभुहि भजइ न
हिं जोई।दीन मलीन दुषित अति सोई॥६॥सुर नर
मुनि इनहीं कों ध्यावैं।चारि पदारथ सहजहि पावैं
॥तुम कौं इहि जप तप बैरागा।केवल हरि पद तैं
अनुरागा॥७॥या सम धर्म न दूजो कोई।हरि पद
की महिमा नहिं गोई॥जद्यपि जथा जोग ब्योहारा।
कहत तुमहिं यह श्रुति अनुसारा॥८॥परम सुथ
ल कुरुषेत्र उदारा।इहां करहु तुम मष बिस्तारा॥
सुनि रिषि गिरा परम सचु पायो॥निरषत हरिहि ह
रष हिय छायो॥९॥तब मुनीस अग्या चित लाई।ज
ग्य करन कौं सुदिन दिषाई॥जिहि बिधि रिषि अनु
सासन दीन्हा॥तिहि बिधि सुग्य न अज्ञा कीन्हा॥१०
॥करि प्रणाम आयसु सिर धारी॥तिन सामग्री सक
ल सँवारी॥देस देस तैं भूपति आये।जिन सबहिन
बसुदेव बुलाये॥११॥रानी सब रनिवास हिं आई।सा
दर सबकौं भवन दिवाई॥बहु बिधि होहिं नित्त जि
व नारा।परसत भोजन सुघर सुवारा॥१२॥अन्न बस
न बहु धाम भराई।रिद्धि प्रताप बरनि नहिं जाई॥पु
नि सब बिप्र बृंद कों बोले।बहुत भाँति दिये दान अ
तोले॥१३॥परम रुचिर बेदिका बनायो।बिधिवत मु
नि जन जग्य करायो॥भयो जग्य तहँ अतिहि उदारा।

संपति की कछु रही न पारा॥१४॥ कमलापति जिहि
सुत कहवाहीं। कमला आपु लुबुधु ग्रह माही॥ त
हाँ रिद्धि की कौन चलावै। सक्र संपदा निरषि लजावै॥
१५॥ पुनि भूषन पहिरावन दीन्हा। अति सनमानि बि
सर्जन कीन्हा॥ मुनिजन गये आपने धामा। हर्दै रा
षि सुंदर घन स्यामा॥१६॥ दोहा॥ परम मगन बसुदे
व मन। निरषि स्याम बलराम॥ गोर स्याम सोभा अव
धि। रूप पुंज गुन धाम॥१॥ सुनि सुनि हरि हलधर सु
जस। देवै अंग न माय॥ आनंदित रनिवास सब। बा
सर सुषद बिहाय॥२॥ मुदित गोप गोपी सकल। नंद
जसोदा मात॥ निसि दिन जात न जानहीं। परम प्रफुल्लि
त गात॥३॥ ब्रजजन परमानंद मय। परिपूरन मन का
म॥ प्रमुदित निरषत स्याम नित। लोचन सुषद ललाम
॥४॥ ऐसी बिधि कुरुषेत मैं। बीते दिवस अनेक॥ ब्रज
बासिन जान्यौ नहीं। मनहुँ भयौ छिन एक॥५॥ तब इ
क दिन कहि देवकी। हरि प्रति सब समुझाय॥ बिस
रि गयो तुहि द्वारिका। रह्यौ आय इत छाय॥६॥ ब्रज
जन अति प्रिय जानि तुझ। कह्यौ न अब लौं याहि॥
कहँलौं करिये कान तिन्ह। रहत बनत इत नाहिं॥७
॥ बिनसत है तुम बिन सकल। राज काज नय नीत॥
चलहु जाय सुध लीजिये। बहु दिन भये बितीत॥८॥

सुनत स्याम देवै की बानी॥ अपनेहू मन मैं यह ठानी॥ ब्रजजन मिलन कह्यौ इक बारे। अवधि बुदेसु बचन प्रतिपारे॥१॥ हरि के बचन अन्यथा नाहीं। जोइ भाषत सोइ करत सदाहीं॥ बचन हेत प्रभु बलि के द्वारे। ठाढ़े अजहूं होत न न्यारे॥२॥ बचन हेत गृह तजि रघुराई। पुनि बहु भरथ जाय समुझाई॥ बहुरि अवध तन किये न आनन। सीय सहित सेयो प्रभु कानन॥३॥ बचन हेत जन सुत कहवावैं। तजि बैकुंठ गर्भ मैं आवैं॥ बचन हेत जसुमति नंद जाये। बालपने हित करि पय प्याये॥४॥ बचन हेत कुरुषेत्रहि आये। ब्रजबासिन के बिरह नसाये॥ पुनि सुरकाज हेतु सुरराई। द्वारामति को सुरत उठाई॥५॥ गुन गंभीर उदधि जदुराई। देवै प्रति तब कह्यो सुनाई॥ ब्रजजन जाय बिदा अब कीजै। आपुन द्वारावति सुधि लीजै॥६॥ वे सब रहन इहां करि जाना। कत दुबिधा मैं राषिय प्राना॥ ऐसे कहि घनस्याम सिधाये। नंद जसोदा के ढिग आये॥७॥ मनहीं मन सोचत गिरधारी। बहुरि कह्यौ कर जोरि बिहारी॥ इतने दिनन रहे तुम पासा॥ भये सकल बिधि पूरन आसा॥८॥ तुमरे चरन तज्यौ नहिं जाई॥ पै अति आय परी कठिनाई॥ सुनि यह ज

सुमति नंदसकानें।कहत कहा हरि परत नजाने॥९॥
स्याम न सनमुष सीस उठावैं।कंपत बदन बैन न
हिं आवैं॥बहुत दिवस बीत्यो इहि ठाहीं।सुषमें जा
नि पस्यौ दिन नाहीं॥१०॥पुरी द्वारिका मैं कोइ नाहीं
।समुझि सुसोच भयो मन माहीं॥यातैं याकौं आय
सु दीजै।आप जाय ब्रज की सुधि लीजै॥११॥जब यह
बचन कहो बलबीरा।नंद जसोदा भये अधीरा॥गिरे
धरनि नैनन बह बारी।कहत न ऐसी कहहु मुरारी॥
१२॥हे मोहन जीवन ब्रज नाथा।बिरध बैस जनि कर
हु अनाथा॥ब्रज मैं जाय कहा सुष लैहैं।तुम बिनु का
कौं निरषि सिरै हैं॥१३॥तहं बसुदेव देवकी आई।द
सा देषि नैनन जल छाई॥कहत नंद मोकौं संग लीजे
।जसुमति रोवति नैकु न धीजै॥१४॥मैं जदुनंदन धाय
कहावत।धायन हूं तो मान बढ़ावत॥हौं तो कछू च
हत हौं नाहीं।मोकौं रहन देहु ग्रह माहीं॥१५॥हमरहु
सरबस गोधन लीजै।नैकु कन्हैयहि देषन दीजै॥सुनि
सुनि हरि भरि लेत उसासू।बारिज लोचन मोचत आँ
सू॥१६॥ दोहा॥बिरह बिथा व्याकुल सकल।ब्रज बासी
नर नारि॥जित तित ही रोवत सकल।परि गयो हाहा
कार॥१॥अति षर भर भइ भीर तहांसबके बदन उदा
स॥मनु कीन्हे कुरुषेत्र मैं।करुना आय निवास॥२॥ क

ह्वो हरिहि बसुदेव तब।हम इततैं टरि जाहिं॥यह सं
ताप कलाप दुषादेषि सकत द्रिग नाहिं॥३॥मोहन म
नहिं बिचार करि।ब्रज जन प्रेम अधीर॥जो हठ करि पठ
वहुं इनहिं।मरिजैहैं मम पीर॥४॥तब प्रभु कीन्ही जुक्ति
निज।माया दीन्ही प्रेर॥जीव चतुर्दस भुवन जिन्ह।करि
राषे सब जेर॥५॥जा माया के बस सकल।नारदादि सुर
सिद्ध॥छिन मैं देत भुराय निज।रहत नैक नहिं बुद्ध॥६॥
एक न समै बिरंचि के दिये बुद्धि बिसराय॥हरि ल्यायो ह
रि के जबहिं।ब्रज तैं गोप रुगाय॥७॥मथ्यो सिंधु जब अ
मिय हित।झगरे सुर रु सुरारि॥मूरत भइ तब मोहनी।मो
हि रहे मदनारि॥८॥चौपाई॥तहं ब्रज जन की कौन च
लावै।हरि की माया कहत न आवै॥फैलि गई चहुंवोर
उदासी।चलन चलन भाषन ब्रज बासी॥१॥माया बिब
स रही सुधि नाहीं।चले सकल ब्रज बासी जाहीं॥गाय ब
छ धाये तिन साथहिं।उलटि न कोउ देषत ब्रज नाथ
हिं॥२॥जा माया के ये गुन भारी।ताके बस न भई इक
प्यारी॥यह सुनि प्रश्न करत जो कोई।राधा कत न भई
बस सोई॥३॥पूरन माया आपुहि राधा॥इक गुन ताहि
करहि कह बाधा॥अग्नि रास मैं ज्यौं चिनगारी।त्यौं मा
या ब्रषभान दुलारी॥४॥बैठि रही रुकमिन ग्रह प्यारी
।बहु बिधि समुझावत बनवारी॥राधा चित्त नैक नहिं

डोलै॥ बहुरि स्याम तैं ऐसे बोलै॥५॥ वे दिन बिसरि गये
मन मोहन। फिरत रहे मम गोहन गोहन॥ मोहिन
चरित अमित हठ ठाने। बिछुरत ही ह्वै गये बिराने
॥६॥ निकुराषि यहि दृग ब्रज वारे। ऐसे निठुर होत
कत प्यारे॥ यौं कहि मौन रही ह्वै प्यारी। तब हरि अ
पने मनहिं बिचारी॥७॥ सत भामादिक नारि बुला
ईं। तुरतहि सकल तहाँ चलि आईं॥ नैनन की से
नन करि तिनकौं। कह्यौ सबन समुझावहु उन कौं
॥८॥ यह सुनिके मन मैं हरषानीं। प्यारी प्रति बोलीं
सब रानीं॥ जदुनायक जो बात बषानत। राधा सो क
त नहिं मन आनत॥९॥ तुम सम जग चातुर को ना
गरि। अति परबीन सकल गुन आगरि॥ समुझि दे
षु अपने मन माहीं। यामैं कछू बड़ाई नाहीं॥१०॥
पर घर बैठ रही हठ ठानी। एकहि बार छाँड़ि कुलका
नी॥ राधा मोहन के रस सानी। कौन सुनै समुझै किहि
बानी॥११॥ इक गोबिंद ध्यान उर माहीं। दूजी और
बासना नाहीं॥ स्याम बिना जीवन ध्रग जग मैं। को
फिरि है चलि हरि हित मग मैं॥१२॥ उदरहि मारि
कटारिन मरिहैं। बिछुरन बिरह ताप नहिं जरिहैं॥
बरु बटि गरल करहुँ कर पाना। ताल बूड़ि तजिहौं न
तो प्राना॥१३॥ इहि बिधि प्यारी मीच बिचारी। स्याम

विया बिछुरन लषि भारी॥परी दृष्ट सरवर पर जाई।
निरषि अगाध नीर मन भाई॥१४॥मन मैं धरि मन
भावन प्यारो।वे ब्रज वनि के सुषन सँभारे॥उमगि परी
सर मैं सुष पावन।बिरह अनल की ताप नसावन॥
१५॥भयौ कंठ लौं जल तिहि ठाहीं।जनु सरसिज सो
हत सर माहीं॥हरि चरित्र जानो नहिं जाई।संतत नि
ज जन के सुषदाई॥१६॥ दोहा॥प्यारी प्रेम निरषि कु
ढ़त।भामा भामिनि अंग॥इहि लक्षन लषि परत मुहि
ले जैहैं हरि संग॥१॥रोस बिबस नहिं रहि सकत।ह
रि सन्मुष आसीन॥कहत परायो पीव कहुँ लैहै जो
र न छीन॥२॥षिजत भये लोचन अरुन।बोलत अति
कटु बोल॥सालत वे जे दुष सहे।कहे सुमन के षोल
॥३॥बहुत दिनन लौं सुष कियहु।सो अब भूलहु का
हँ॥जाय बैठि ब्रज षरक निज।अंत परायो नाह॥४॥
बासुदेव भाषत जगत।छपन कोटि जदुनाथ॥अब इ
नकौं नहिं फबत यह।कियो तुम्हारो साथ॥५॥द्वै दिन
सिसु पन ह्वै गयो।दुहत रहे जब धेनु॥किये रास रस
रंग बन।फिरत बजावत बेनु॥६॥नृप तनया सोरह स
हसा बरी एक से आठ॥हेत प्रीत अब को गनहिं।भ
ई महल की ठाट॥७॥वेवहु ग्वाल गवाँर निज।लाय
क नानहु नेह॥लोक बेद तजि हठ करत।पैठत हैं प

र गेह॥८॥चौपाई॥ कुल जुबती की बातहिं न्यारी
।निबहत नेम नाह की प्यारी॥जननी जनक सम
पैंत जाही।तजत न कबहुँ बधू कुल नाही॥१॥ इ
न बातन आवत नहिँ लाजा।झगेड़त पर पीतम
के काजा॥सुनि सरोस भामा की बानी। सर तैं बोली
राधा रानी॥२॥कह कुढ़ि कुढ़ि इतनो दुष पावै
।ऐगुन कान्हू हि नैकु न भावै॥ इतनो गरब कर
त मन माहीं।जनु अरु कोउ जग ब्याही नाहीं॥
३॥ सकल चहूं दिस ब्याहे होई।प्रेम पन्थ पाव
त नर कोई॥ यहै गावत सद ग्रन्थन माहीं। प्रेम
बिना नर पावत नाहीं॥४॥ नेम धस्यौ तिन नैकु
न जाने।रहै आपने गरभ भुलाने॥ हरि कबहूं कि
हि नाते नाही।होत प्रेम बस स्याम सदाहीं॥५॥
हीन बरन कुल जात न जाने। केवल रहत प्रेम र
स साने॥ अधम उधारन हरि को बाना। गनिका
तास्यौ सब जग जाना॥६॥ केवट कीस गिद्ध ग
ज तारे। ब्याध निषाद निकिष्ट उधारे॥ बाल सुता
दि प्रभंजन नंदन। तारे कपि हन्दहि रघु नन्दन
॥७॥विद्या भूति बुद्धि चतुराई। इन बातन रीझत
न कन्हाई॥ नीच कुचील षलहि नहिं देषैं। केवल
प्रेम भक्ति करि लेषैं॥८॥ छपन कोटि जदु नाते बा

रे।तिन तैं स्याम किते। हित पारे॥ ब्रज बासी जन
अहिर गवाँरा। ते हरिजू के प्रान अधारा॥ ९॥ प्रेम
हिं हित नाते। सब ठाने। हरि प्रति पूछ लेहि नहिं
माने॥ जननी जनक नेम करि देहीँ। ते ते। जगत मान
सब लेहीँ॥ १०॥ तैं अधिकार अधिक कह कीन्हा।
किते। अजस हरि हित सिर लीन्हा॥ ते। पितु जस
परगट जग माहीँ। मनि चोरी दीन्ही हरि पाहीँ॥ ११॥
मन मोहन सखि परगट कीन्हैं॥ तब षिसियाय लाय
तुहि दीन्हैं॥ समै परे नर जान्यौ जाई। ते। पर किती
परी कठिनाई॥ १२॥ कूप मध्य दादुर कह जाने। सिं
धु अपार सार नहिं मानै॥ याकी गति रस रुकमि
नि बूझै। प्रेम पंथ तोकहँ नहिं सूझै॥ १३॥ आपु न
समुझत नेम रु प्रेमू। सिषवत परहि गिरा बुद्धि जेमू
॥ प्रेम प्रताप बिदित नहिं तोही। प्रेम बिना हरि भक्ति
न होही॥ १४॥ भक्तन की महिमा को बोलै। जिन्ह सँ
ग हरि आयुध धरि डोलै॥ दुरबासा हरि भक्तहि त्रा
स्यो। प्रभु सोउ मुनि के गरब हि नास्यो॥ १५॥ भक्त अ
पमान स्याम नहिं करहीं। भृगु की लात हृदै निज धर
हीं॥ भक्त बस्य सो चक्र चलायो। दुरबासहि नृप सर
न दिखायो॥ १६॥ दोहा॥ हरि हरिजन अंतर नहीं॥ श्री
मुष कह्यो सुनाय॥ द्वैत भाव जे जानहीं। ते नहिं हरि हि

सुहाय॥१॥सानुकूल भक्तहि सदा॥कबहुँ न आव
न कोह॥जद्यपि गुन औगुन करहिं॥तद्यपि राषत
छोह॥२॥बेद बदत सब जग बिदित॥हरि हरिजन अ
नुसार॥भक्त बस्य प्रभु भक्त हित॥अकरन करन मुरा
रा॥३॥भक्ति न आवै प्रेम बिनु॥भक्ति बिना नहिं भक्त॥
नौधा भक्ति कहावई॥पिमहिं के आसक्त॥४॥कोटि ब
रष लौं तप तपिय॥बिबिधि भाँति करि नेम॥हरि हिरदै
आवैं नहीं॥जौ लगि प्रगट न प्रेम॥५॥छिन भर हूं जो प्रे
म करि॥चित पावै बिस्राम॥बिनु प्रयास भव निधि तर
इ॥लहै स्याम पद ठाम॥६॥कहा भयो हरि द्वारिका॥ब
से छाड़ि ब्रज बास॥तद्यपि मन मैं है रहे॥ब्रज जन हीं के
पास॥७॥तुम तैं बिछुर किये बिपुल॥सुर नर मुनि के
काज॥सदा निरंतर बसत ब्रज॥प्रेम बिबस ब्रज राज॥
८॥चौपाई॥प्रगट प्रेम रबि जा उर राजै॥तहं षद्योत ने
म कत छाजै॥जो लगि प्रेम प्रगट नहिं अहई॥तौ लगि
नेम जगत को गहई॥१॥प्रेम रतन जबही नर पावै॥नेम
कांच कर तैं छिटकावै॥प्रेम रहित नर सोहहिं कैसे॥सो
म बिहीन सर्बरी जैसे॥२॥प्रेम रहित नर सोहहिं कैसे॥बि
ना सरल ना साधू जैसे॥प्रेम रहित नर सोहहिं कैसे॥बाग
बिचि बृछ बिनु जैसे॥३॥प्रेम बिना नर पसू समाना॥प्रेम
लह्यौ तिन्ह सब कछु जाना॥प्रेम कथा कछु जात न गायो

।सेवरी को चाष्यो फल षायो॥४॥प्रेम बिबस श्रीरघु कुल चन्दा॥ दनुज वृन्द कर कियो निकन्दा॥सक्ति प्रहार हृदै निज लीन्हा॥पाछे राषि बिभीषन दीन्हा॥५॥भक्तहि देषि सकहिं नहिं भीरा।प्रेम बिबस आपुन सह पीरा॥ऐसे प्रेम बिबस गोबिन्दा॥बँधे जाय धीवर के फन्दा॥६॥ प्रेम बिबस रुकमिनिहिं बिवाहीं।अजहुं सिरोमनि नारिन माहीं॥प्रेम बिबस द्विज तंदुल षायो।चरनोदक लै सीस चढ़ायो॥७॥बिपुल बिभूत दई जग जाने। तबहू स्याम रहे सकुचाने॥प्रेम बिबस प्रभु दूत कहाये। पाण्डव हेत बसीठी धाये॥८॥दुरजोधन को मेवा त्याग्यौ।साक बिदुर घर नीको लाग्यौ॥ भारथ समर कियो जब पारथि।प्रेम बिबस आपुन भये सारथि॥९॥कीन्हे बिपुल प्रेम बस लीला। कहँ लौं कहिये चरित सुसीला॥प्रेम बिबस प्रभु काह न कीना। ब्रज मैं अति चरित्र रंग भीना॥१०॥सेस महेस सुरेस गनेसा। अंत न पायो किन्हहूँ लेसा॥प्रेम बिबस जसुधा के धामा। ऊषल बाँधि रहे घन स्यामा॥११॥गिर गोबरधन कर पर धार्यो।प्रेम बिबस बन गैयन चार्यो॥ ब्रज बासिन को जूठन षायो॥जिहि अविलोक बिरंच भुलायो॥१२॥कियो पान दावानल पल मैं।नंद हेत धाये हरि जल मैं॥प्रेम बिबस भये गोपी नाथा॥ इन पायन पर पर

से माथा॥१३॥ऐसे स्याम प्रेम रँग राचे।षोड़स सहस रूप धरि नाचे॥जो सुष इन्द्रादिक नहिं देष्यो।सारद नारद कबहुँ न लेष्यो॥१४॥जो अज संकरादि नित ध्यायो।सो ब्रज गोप सुगम करि पायो॥तेरे अग्र प्रेम का लेषा।लोचन हीन मुकुर मनु देषा॥१५॥सत्य सूर लज्या छबि गाता।दानरु दया शील हित बाता॥जिहि बिधि देइ दई सो होई।कोटि करहु सीषे नहिं कोई॥१६॥ दोहा॥ लाष बात की बात यह।कत करिए बकवाद॥जिहि ब्यापै सो जानहीं।प्रेम सुरस को स्वाद॥१॥जहाँ बसत हरि भक्त उर।तहाँ रहत हौं संग॥बहुरि गिरा करि रटत जब।दम्पति परत न भंग॥ २॥जनि गरबित मन में रहहु।मम सम प्रेम न तोहि॥ पूछत किन जदुराय सौं।झूठ साँच को होहि॥३॥ सुनि सुनि स्यामा के बचन। अति अनन्द जदु नन्द॥ तब सतभामा प्रति कह्यौ।बिहँसि स्याम सुष कन्द॥४॥राधा कहत सु सत्य मुहि।इहि सम प्रिय नहिं कोइ॥ कितनो हू कोऊ करहु।याकी सर नहिं होइ॥५॥ब्रज बासिन हित को कहइ।प्रेम पुंज की षान॥ प्रगटहिं प्रेम अषंड उर।करहिं जो इन गुन गान॥६॥प्रेम लह्यौ तिन सब लह्यौ।कछु न एक बिन प्रेम॥लोन बिना भोजन बिरस प्रेम हीन नर तेम॥ ७॥जिन पायो तिन प्रेम करि। इन

जु कही सो सार॥भईं षिस्यानी सुनत मन।रुकमिनि
बिनु सब नारि॥८॥चोपाई॥ तब प्यारी प्रति कह्यौ
कन्हाई॥तूं कत सर में रही समाई॥ बाहिर निकसि
आव मो पाहीं।सोच रही कत निज मन माहीं॥१॥
कहत न कत उर मैं जो आई।भावी है सो मेट न
जाई॥जब मोहन यौं बचन सुनाये॥तब राधा मन
धीरज आयौ॥२॥सुनहु स्याम घन अंतरजामी। करु
ना निधि प्रभु त्रिभुवन स्वामी॥सदा कृपाल अभै के
दानी॥भक्त सुषद जस निगम बषानी॥३॥गुन सागर
नागर नंद नंदन।आनँद कन्द भक्त उर चन्दन॥सगु
न रूप सुंदर दिब्येसा। इच्छा पूरन परम रमेसा॥४॥र
सिक सिरोमन रास बिहारी।बाँके बंसीधर गिरधारी
॥ब्रज बल्लभ गोपी जन प्यारे।अहो जसोदा नन्द दुला
रे॥५॥जो यह बचन मानिके लीजे।माँग्यौ दान हमैं
प्रभु दीजे॥तौ सरवर तैं बाहिर आऊं।ना तरु याही
ठाम समाऊं॥६॥सुनि सप्रेम प्यारी के बैना।भरि ली
न्हे दोउ राजिव नैना॥गद गद कहत कहत कत ना
हीं।जो माँगहि देहौं इहि ठाहीं॥७॥भक्तहि कछु अ
देय नहिं मेरे।भाषत चरन सपथ करि तेरे॥सदा भक्त
को भायो ठानौं।भक्तन हीं के हाथ बिकानौं॥८॥ बरु
मैं आपु सहौं कठिनाई।भक्त बिरह मोहि सह्यौ न

जाई॥ तोसे भक्त भाग तें पाऊँ।निस बासर जिन
के गुन गाऊँ॥९॥भक्त प्रेम बस बिबस रहौं नित।सु
मन बास हित अलि जिमि जित तित॥सृष्ट मांह भक्त
हि मोहि प्यारा।भक्तन हीं के हित अवतारा॥१०॥त
ब राधा बोली मनमोहन।वृंदाबन डोलो तुम गो
हन॥वे ब्रज बेष बाँसुरी लीन्हे।नटवर साज मनोह
र कीन्हे॥११॥नित्त साँवरी मूरत पेषौं।तो मैं बहुरि जा
य ब्रज देषौं॥ना तरु साँची कहत बिहारी।यह तन
तुम पर है बलिहारी॥१२॥सुनत बचन प्रभु करुना
ऐना।एव मस्तु बोले सुष दैना॥यह सुनिके प्यारी सचु
पाई।निकसि ताल तैं तट पर आई॥१३॥ता छिन ल
सी राधिका ऐसी।प्रगटी रमा छीरनिधि जैसे॥तब रुक
मिनि बर बसन सँवारी।हित करि चुनि पहिराई सारी
॥१४॥मिलीं परसपर उभै सुहाई।प्रीति रीति कछु जात
न गाई॥कौतुक निधि हरि एक अनंता।द्वै तन धारि लए
भगवंता॥१५॥गए द्वारिका नृप तनधारी।धरनी हित प्र
भु पातक हारी॥राधहि ता तें संग न लीन्हा॥अचल
बेष हरि ब्रज हित कीन्हा॥१६॥दोहा॥निराकार निर्गु
ण यदपि।तदपि सगुन धरि देह॥करत फिरत नाना च
रित।केवल भक्त सनेह॥१॥गिरा ग्यानहू अगम गति
।अंत न लहे गौरीस॥नित नूतन गुन गावहीं।रसना

सहस अहीस॥२॥निज मुष तैं भाष्यौ अहो।भक्त
अतिहिं प्रिय मोहि॥भक्त बचन उलंघौं नहीं।अबिहि
त बिहित जो होहि॥३॥भक्तन की महिमा अमि
त।पार न पावै कोय॥जहाँ भक्त जन पग धरैं।अस
ट्स तीरथ सोय॥४॥भक्त संग छाड़ौं नहीं।सदा र
हत तिन पास॥जहाँ न आदर भक्त को।तहाँ न मे
रो बास॥५॥फिरत धाम बैकुंठ तजि।भक्त जनन के
काज॥जोइ जोइ जन मन भावहीं।धारत सोइ तन
साज॥६॥ज्यौं बिहंग बस पींजरे।रहत धनी आधी
न॥त्यौं हीं भक्ताधीन प्रभु।निज जन हित तन लीन
॥७॥ऐसे प्रभुहि न जे भजहिं।ते नित भव भ्रम अं
ध॥भक्ति किये निज प्रभु सदृस।करत ताहि निर
बंध॥८॥चौपाई॥इच्छा मात्र सकल जग करता
।पालन हार सकल संघरता॥कंपत काल जासु भ
य भारी।सोई भक्ताधीन मुरारी॥१॥भक्तन हित
नाना तन धारे।सुक सनकादिक गावत हारे॥अ
ति अलक्ष्य गति जानि न जाई।बेदहु जाको भेद
न पाई॥२॥पूरन ब्रह्म सच्चिदा नंदा।परमानंद दरन
दुष दंदो॥आदि पुरुष सचराचर रूपा।अज अद्वैत
अषंड अनूपा॥३॥अभय असंग अनीह अनामा।
अमित अरूप जोतिमय धामा॥परम उदार बिस्व

के मंडन। दीन दयाल भक्त भै षंडन॥४॥ संतत संत
हि रहत सरल सो पल बन गह नहिं दहन अनल
से॥ चिंतत दायक सुर तरु वर से। तम भ्रम हरन दिवा
कर कर से॥५॥ निधन जनन कौं कोटि धनद से। मुनि
मन सिषिहि सघन नीरद से॥ पतितहि पावन सुरसरि
तट से। भव बोहित तारन केवट से॥६॥ सत्रु निकर
कौं महा सुभट से। गोपी जन कौं अति लंपट से॥
निकट निहारत निपट निडर से। दूरि बिलोकत अतिहि
बिकट से॥७॥ संतत हरि जैसे कौं तैसे। ठानत कबहूं
नाहिं अनैसे॥ हरि की गति हरि ही बनि आवै। कह
त सुनत किहि समुझि न आवै॥८॥ धरि नट रूप
राधिका साथा। वृंदाबन आये ब्रज नाथा॥ वै किसोर
नव जुगल बिहारा। रहत सदा ब्रज नंद कुमारा॥९॥
जिनहिं प्रेम तैं नैन निहारे। तन मन धन छवि पर ल
षि वारे॥ मोर मुकुट गुंजा बन माला। कटि कछनी पट
पीत रसाला॥१०॥ नील कमल दल मंजुल बरना। नैन
चपल अनियारे अरुना॥ मकराकृति कुंडल श्रुति सो
हे। छबि अवलोकि मैन मन मोहे॥११॥ अंग अंग आभू
षन सुंदर। सोभित जनु सोभा के मंदिर॥ वे बन धा
तुन चित्रित कीन्हे। कनक लकुटिया कौंषहिं लीन्हे॥
१२॥ मधुर मंद मृदु मुरलि बजावत। मुष ढिग लसत

वेध करु छाजत॥ बाम अंग सोहत श्रीप्यारी। छबि की सीव अमित उंजियारी॥१३॥ मनि मय भूषन भूषित चारू। कीन्हे सुभ षोड़स सृंगारू॥ जुगल मनोहर छबि की सोभा। भ्राजत कोटि सूर ससि ओभा॥१४॥ वृंदाबन चैतन्य सरूपा। कृष्ण बिहार हेत जदु रूपा॥ चिंतामनि मै महा सुदेसा। परसत रहत न अघ लव लेसा॥१५॥ वेई कदम कुंज की छाया। जिहि लषि मिटत मोह मद माया॥ सुमन सुगंध झरत साषा तैं। गुंजत भ्रमर भ्रमत मद मातैं॥१६॥ दोहा॥ परम रम्य वे घन सघन। कुंज पुंज छबि धाम॥ वेई ब्रन तरु हरित अरु। लता सुललित ललाम॥१॥ ❀ ॥ वेई बरही नटत बर। कूकत कोकिल कीर॥ वे मराल कलरव करत। वे जमुना के तीर॥२॥ वे षग मृग बोलत बिबिध। बहत त्रिबिध सु समीर॥ प्रफुलित वे कैरव कमल। वे तरंग वे नीर॥३॥ वेई बिपन बसंत नित। वेई गोपी वृंद॥ वे रजनी रस रास बर। करत नवल ब्रज चंद॥४॥ बरषत गगन बिदूष जन। सुमन सुगंध अपार॥ बंछत वृंदा बिपिन रज। बंदत बारंबार॥५॥ वे राधा माधव सदा। ब्रज मैं करत बिहार। धन्य सुथल परसत चरन। रतन जात बलिहार॥६॥ प्रेम रतन गावहिं सुनहिं। जे सप्रेम नर नारि॥ कृष्ण प्रेम से पावहीं। स

फल सुषन को सार॥७॥हरि सम जग कछु बस्तु न
हिं।प्रेम पंथ सम पंथ॥सत गुरु सम सज्जन नहीं।गी
ता सम नहि ग्रंथ॥८॥ सोरठा॥जो जन होहु सुजान
। लीजो चूक सुधार धरि॥ बालक अति अग्यान।हौं
अजान जानत न कछु॥१॥ अति जड़ बुद्धि मत मंद।
नहिं कबि बुधि नहिं चतुर कछु॥ मो कौं गमहु न छंद
॥यह गायौं गुरु कृपा तें॥२॥ठारह से चालीस।चतुर
बरष जब बितित भय॥बिक्रम नृप अवनीस।भये
भयो यह ग्रंथ तब॥३॥माह माह के माह।अति सुभ
दिन सित पंचमी॥गायो परम उछाह।मंगल मंगल
बार बर॥४॥कह्यौं ग्रंथ अनुमान।त्रय सत अरसठ चौ
पई॥तिहि अर्ध रु अठ जान।दोहा सोरह सोरठा॥५॥
कासी नाम सुधाम।धाम सदा सिव को सुषद॥तीरथ
परम ललाम।सुभग मुक्ति बरदान छम॥६॥ता पाव
न पुर माहिं।भयो जनम या ग्रंथ को॥महिमा बरनि
न जाहिं।सगुन रूप जस रस भर्यौ॥७॥कृस्न नाम सु
ष मूल।कलि मल दुष भंजन भजत॥पावहिं भव नि
धि कूल।जाके मन यह रस रमहि॥८॥कुरु क्षेत्र सुभ
थान।ब्रज बासी हरि को मिलन॥लीला रस की षान।
प्रेम रतन गायो रतन॥९॥ इति प्रेमरतन भाषा समाप्त